स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–18, अंक–5, वैशाख 2066–2067, अप्रैल, 2010

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर-8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली-110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011-26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 से मुद्रित।

आवरण कथा-6

आज दुनिया में इस विषय पर चर्चा चल रही है कि क्या चीनी अर्थव्यवस्था जो दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था है, उसका बुलबुला फूट सकता है कि नहीं...

कवर पेज

अ नु क्र म

आवरण लेख
क्या फूट जायेगा चीनी बुलबुला
– डॉ. अश्विनी महाजन **6**

कृषि : आयातित शिक्षा पर सवाल
– देविन्दर शर्मा **8**

अर्थतंत्र
कारों की संख्या घटाने से होगा आर्थिक विकास
– डॉ. भरत झुनझुनवाला **11**

मुद्दा
मरीजों से खिलवाड़
– निरंकार सिंह **13**

पहल
ढुलमुल नीति छोड़ – चीन के प्रति सख्त रूख आवश्यक
– छगनलाल बोहरा **16**

सुरक्षा
चीन की चुनौती
– डॉ. परशुराम गुप्त **18**

धरोहर
मोक्षदायिनी गंगा का वर्तमान अस्तित्व
– भगवती प्रसाद उनियाल **21**

पर्यावरण
वन पशुओं की सुरक्षा भी जरूरी
– उमेश प्रसाद सिंह **24**

साक्षात्कार :
शब्दों की चौकीदारी संभव नहीं : अनुपम मिश्र **26**

दृष्टिकोण
आम आदमी को निराशा व खास आदमी को थोड़ी आशा
– डॉ. सूर्य प्रकाश अग्रवाल **28**

विचार–विमर्श : कानून से परे नेता
– लक्ष्मीकांता चावला **31**

चर्चा : जरूरत है छोटे राज्यों के निर्माण की
– कल्लूरी श्रीनिवास रेड्डी **34**

पाठकनामा / 2, समाचार परिक्रमा / 4
आंदोलन / 33, स्मरण / 35

पाठकनामा

आम आदमी के साथ नहीं सरकार का हाथ

वाह क्या बात है! कांग्रेस का हाथ – आम आदमी के साथ। उक्त नारे को लेकर केन्द्र में दुबारा सत्ता में बैठी और दिल्ली में तीसरी बार कांग्रेस आई। लेकिन लगता है यह नारा केवल प्रचार का ही था। अब इस नारे ने लोगों के खाने का निवाला ही छिन लिया है। दिल्ली में कॉमनवेल्थ गेम्स की तैयारियों के चलते खजाना खाली हो गया। उस खजाने को भरने के लिए शीला सरकार ने दिल्ली बजट में दिल्ली वासियों को भी महंगाई का एक ओर झटका दे डाला।

पहले केन्द्र में बैठी सरकार ने महंगाई की मार जनता पर डाली फिर दिल्ली सरकार के बजट ने आम आदमी को भी अपना मुख्य निशाना बनाया है। वह चाहे घर की थाली हो या यातायात का साधन हो या फिर घर–मकान बनाना। महंगाई की मार से त्रस्त आम आदमी के जख्म पर दिल्ली सरकार ने खूब नमक छिड़का है।

यह वही सरकार है जो पहले नरेगा चलती है, गरीबों के लिए बीपीएल कार्ड बनाने पर जोर देती है फिर उन पर महंगाई की मार मारती है। उक्त विषय पर अगर ध्यान दिया जाए तो काफी सोची समझी साजिश नजर आती है। आज चाहे केन्द्र में बैठी हुई सरकार हो या राज्य सरकारें सभी गरीबों को मारने पर तुली हुई है। केवल नाममात्र के लिए घोषणा करती हैं। वक्त आ गया है अब जनता को एकत्रित होकर खुद महंगाई से लड़ना होगा। सरकारें अब निकम्मी हो गई है उसे तो अपना खजाना भरना है चाहे गरीब जनता पीसती ही जाए।

– अमरेश कुमार, आया नगर, दिल्ली

अब होगा पढ़ाई पर सबका हक

मैं स्वदेशी पत्रिका काफी दिनों से पढ़ता हूँ। आपकी पत्रिका में हर तरह की समस्या के बारे में लिखा जाता है। वर्तमान समय में 1 अप्रैल से 6 से 14 साल तक के बच्चों को शिक्षा अनिवार्य हो गयी है साथ ही इन उम्र के गरीब बच्चों को प्राइवेट स्कूलों में मुफ्त शिक्षा मिल सकेगी। लेकिन सरकार और प्राइवेट स्कूलों में आज भी खींचातानी चल रही है। आज प्राइवेट स्कूलों की संस्था नैशनल प्रोग्रेसिव स्कूल कॉन्फ्रेंस (एनपीएससी) के वाइस चेयरमैन एल. वी. सहगल का कहना है कि सरकारी और प्राइवेट स्कूलों के इंफ्रास्ट्रक्चर में बड़ा अंतर है। साथ ही उनका कहना है कि अगर सरकार आफ्टरनून शिफ्ट में भी स्कूल चलाने की इजाजत प्राइवेट स्कूलों को दे दें और सरकार इसका खर्च उठाए, तो 25 फीसदी के बदले 40–50 फीसदी गरीब बच्चे प्राइवेट स्कूलों में पढ़ सकते हैं। इस तरह की बयानबाजी आजकल अखबारों में आती रहती है। इन बयानबाजी को देखकर लगता है कि दिल्ली सरकार भी लोगों को गुमराह करने में लगी है। खैर, शिक्षा का अधिकार सबके लिए हुआ काफी अच्छा हुआ है।

– राकेश कुमार दास, मीडिया अपार्टमेंट, गाजियाबाद

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्क: 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

दंतेवाड़ा में जो कुछ हुआ वह चिंता का विषय है। शायद प्रशिक्षण या अन्य चीजों में आंतरिक तौर पर कुछ कमी रह गई।

– वी.के. सिंह, थल सेना अध्यक्ष

दंतेवाड़ा में मारे गए सीआरपीएफ के जवान अच्छी तरह प्रशिक्षित थे।

– पी. चिदंबरम, गृहमंत्री

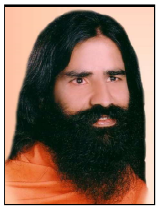

भारत में लोकतंत्र को लूटतंत्र बना दिया गया है। लोग कहते हैं कि राजनीति में ईमानदार के लिए जगह नहीं है। मैं इस बात को पलट देना चाहता हूँ।

– रामदेव बाबा, योग गुरु

दंतेवाड़ा में सैनिकों पर यह हमला भारत के देशभक्त और राष्ट्रवादी ताकतों के लिए एक चुनौती बन गया है। इसका सामना करने के लिए विध्वसंक माओवादियों के खिलाफ जी–जान से लड़ाई शुरू करनी होगी।

– नितिन गडकरी, भाजपा अध्यक्ष

संपादकीय

माओवाद मर्ज की दवा भी ढूंढ़िए

बंदूक के बल पर व्यवस्था बदलने निकले माओवादियों ने दंतेवाड़ा के जंगलों में सुरक्षा बलों को मार कर अपनी रक्त पिपासा कुछ हद तक जरूर शांत कर ली होगी। उनके पास गरीबों को न्याय और सम्मान दिलाने के लिए इससे ज्यादा कारगर उपाय नहीं है। वे वंचितों को अधिकार दिलाने के लिए हजारों परिवारों को उजाड़ने से परहेज नहीं करते। उनका लाल सलाम केवल खून से पूरा होता है। उनका रचनात्मक या सहयोगात्मक आंदोलन में विश्वास नहीं है। वे लोकतंत्र को नहीं मानते। उनका वैचारिक आधार भारतीय नहीं है। वे हमारे संविधान और कानून को नहीं मानते। उनकी भाषा आतंक की भाषा है, और उनका दुश्मन वह हर आदमी है जो उनकी बात नहीं मानता। चाहे वह गरीब से गरीब लोग क्यों न हों। 20 शताब्दी के छटे दशक के उत्तरार्द्ध में पश्चिम बंगाल के एक छोटे से गांव नक्सलवाड़ी से शुरू हुआ सशस्त्र आंदोलन आज पूरी तरह अपने लक्ष्य से भटक चुका है। चारू मजूमदार और कानू सान्याल के मस्तिष्क से निकला यह वाम आंदोलन आज सिर्फ लूट मार और हत्या का कारक बन गया है। माओवादी समाज सुधारते-सुधारते सत्ता प्राप्ति के सपने देखने लगे हैं। वे अभी से ही अपनी मिनी सरकारें चला रहे हैं। जंगलों में बसे गांवों को बाकी दुनिया से काट अपना एक छत्र राज्य कायम करने में लगे हैं। वे अपनी अदालते चला रहे हैं। वे लोगों बर्बरतापूर्ण तरीके से सजा दे रहे हैं। व्यापारियों से कर (जबरन उगाही)वसूल रहे हैं। बैंक लूट रहे हैं। चलते राहगिरों से पैसे लूट रहे हैं। उसके बाद भी वे अपने को गरीबों का मसीहा कहलाना पसंद करते हैं। लोगेां को अपने पक्ष में करने के लिए वे भय का सहारा लेते हैं। इतने सब दुष्कर्मों के बावजूद माओवादी अपना आधार बढ़ा रहे हैं। केंद्रीय गृहमंत्रलय द्वारा जारी आकड़ों के अनुसार 22 राज्यों के लगभग 250 जिलों तक में माओवादी पहुंच चुके हैं। वे अलग-अलग लगभग 20 संगठन बना चुके हैं। पचास हजार से ज्यादा शस्त्रधारी इनके पास हैं। ये आकड़ें सोंचने के लिए मजबूर करते हैं कि समाज और कानून के खिलाफ काम करने के बावजूद इनके समर्थक इतनी तेजी से क्यों बढ़ रहे हैं। कारण साफ है। चाहे राज्य हों या केंद्र हो, नीतियों में प्रमुखता सिर्फ समर्थवानों को मिल रही है। निजी कंपनियां या बड़े उद्योगपति अपने लाभ के लिए सरकारों से मनमाफिक फैसले करा ले रहे हैं। संसाधनों और रोजगार के अवसरों पर धीरे-धीरे निजी क्षेत्र का कब्जा होता जा रहा है। पहले से वंचित वर्ग इन स्थितियों को देखकर अपना आपा खो रहा है। उसके अंदर उपज रहे असंतोष को जब किसी माओवादी का आदर्श सामने आता है तो वह सहज उसकी ओर आकर्षित हो जाता है। यह अलग बात है कि थोड़े ही दिन में उसकी आंखें खूल जाती है। वह ठगा महसूस करता है। लेकिन एक बार माओवादियों के चंगूल में आ जाने के बाद उसके लिए उनसे बचना मुश्किल हो जाता है। यह देखने में खूब आ रहा है कि गांव के लोग अब माओवादियों ये बचने के लिए पलायन कर रहे हैं। अब सरकरा के उपर जिम्मेदारी है कि शस्त्र बल से माओवादियों को परास्त करने के बाद माओवाद की प्रवृति को पुनः पनपने से रोकने का उपाय करे। जिनके पास विकास की किरण नहीं पहुंची है वहां तक सरकार पहुंचे, जिनका अभी तक कोई आर्थिक उत्थान नहीं हुआ है उनकी प्रगति सुनिश्चित करे। जिन्हें भर पेट भोजन नहीं मयस्सर उन्हें पौष्टिक भोजन के साथ साथ चिकित्सा और शिक्षा के साधन मुहैया कराए जाएं। माओवादियों को परास्त करने के साथ साथ माओवाद का भी इलाज होना चाहिए।

कंजूस है हमारे धन कुबेर दान देने में

आज देश में भले ही कुबेरों की संख्या बढ़ रही हो, लेकिन फिर भी दान देने के मामले में वह काफी कंजूस हैं। यह दावा वैश्विक प्रबंधन सलाहकार कंपनी बेन एंड अंप के शोध में किया गया है। हाल ही में फोर्ब्स पत्रिका ने रिलायंस इंडस्ट्रीज के मुकेश अंबानी और स्टील किंग लक्ष्मी मित्तल को दुनिया के पांच धनी व्यक्तियों की सूची में शामिल गया था। लेकिन इसका यह मतलब न निकालें कि ये खुले हाथों से दान देते हैं।

अध्ययन के अनुसार भारत में 2009 में 7.5 बिलियन डालर (342 अरब रुपये) दान किया गया। यह देश के सकल घरेलू उत्पाद 0.6 प्रतिशत के बराबर है। यह अमेरिका में पिछले साल दिए गए दान से 2.2 प्रतिशत और ब्रिटेन से 1.3 प्रतिशत कम है।

बेन के अर्पण सेठ के अनुसार देश की करीब 40 प्रतिशत जनता बड़ी मुश्किल से गुजर बसर करती है। ऐसे में भारतीय कुबेरों को ज्यादा उदार होने की जरूरत है। अध्ययन के अनुसार भारत में करीब 25 लाख गैर लाभकारी संगठन सक्रिय है। देश का आधा दान धार्मिक, खेलों और सांस्कृतिक संस्थाओं को जाता है। सबसे ज्यादा करीब 65 प्रतिशत दान केन्द्रीय और राज्य सरकारें आपदा राहत कार्यों के लिए प्रदान करती है। दान का बड़ा हिस्सा विदेश से ही आता है जबकि मात्र 10 प्रतिशत हिस्सा आम जन से आता है। दूसरी ओर अमेरिका में 75 प्रतिशत दान आमजनों और कारपोरेट कंपनियों से आता है।

गाँवों में नहीं दिख रहा विकास

गांवों में नहीं दिख रहा है विकास – यह कहना है राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) की ओर से देश में घरेलू खर्चे की स्थिति पर जारी रिपोर्ट में। रिपोर्ट के अनुसार 10 फीसदी ग्रामीण महज 400 रुपए के प्रति माह पर जिंदगी गुजार रहे हैं।

रिपोर्ट के आंकड़े साबित करते हैं कि आर्थिक विकास दर में काफी तेजी होने के बावजूद ग्रामीणों के जीवन स्तर में बहुत सुधार नहीं हो रहा है। 65 प्रतिशत ग्रामीणों के खर्चे राष्ट्रीय औसत से भी कम है। गांव वालों के खर्चे का 56 प्रतिशत हिस्सा खाने–पीने में ही चला जाता है। आज भी गांवों में 77 प्रतिशत परिवार लकड़ी या उपले पर खाना पका रहे हैं। इस सरकारी रिपोर्ट से यही पता चलता है कि सरकारी नीतियों का फायदा गांवों तक नहीं पहुंच रहा है।

पयर्टन क्षेत्र होगा दुनिया का दूसरा बड़ा रोजगार

पर्यटन क्षेत्र दुनियाभर में अगले दस सालों में चार करोड़ लोगों को रोजगार देने के साथ ही दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा रोजगार क्षेत्र बन जाएगा। वाणिज्य और उद्योग मंडल एसोचैम और यस बैंक के संयुक्त अध्ययन में कहा गया है कि जिस तरह से देश दुनिया में यात्रा और पर्यटन क्षेत्र बढ़ रहा है उससे लगता है कि 2019 तक यह क्षेत्र रोजगार उपलब्ध कराने के मामले में दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा क्षेत्र बन जाएगा।

भारतीय सेना की मारक क्षमता में एक और इजाफा

बीते माह सशस्त्र सेनाओं की मारक क्षमता को और पैना करते हुए स्वदेश निर्मित मिसाइल पृथ्वी–2 और धनुष का सफल प्रक्षेपण किया गया।

परमाणु क्षमता से लैस इन मिसाइलों को उड़ीसा तट से कुछ दूर दो अलग–अलग स्थानों पर एक के बाद एक सफल परीक्षण हुआ।

आईटीआर के निदेशक एस पर दश के अनुसार दोनों प्रेक्षपास्त्रों अपने मानकों पर खरे उतरे हैं।

पृथ्वी मिसाइल अपना लक्ष्य 295 किमी तक भेद सकती है साथ ही 500 आयुध ले जाने की क्षमता रखती है। जबकि धनुष 350 किमी तक मार गिराने में सक्षम है और 500 आयुध ले जाने की क्षमता रखती है।

सतह से सतह पर मार करने वाली यह प्रक्षेपास्त्र सैन्य बलों में शामिल किया जा चुका है।

घट रहा है तेल भंडार

आक्सफोर्ड विश्व विद्यालय के एक शोध पत्र में कहा गया है कि तेल संसाधनों का बेहतर इस्तेमाल तथा वैकल्पिक ऊर्जा आज के दौर की सबसे बड़ी जरूरत है। रिपोर्ट में आगाह किया गया है कि भविष्य में तेल उत्पादन की क्षमता की गुंजाइश कम होती जाएगी। रपट में कहा गया है कि हम ऐसे बिन्दु पर पहुंच चुके हैं जहां से भविष्य की बढ़ती मांग के लिए ईंधन आपूर्ति की क्षमता सिमटने वाली है। ऐसे में जरूरत इस बात की है कि तेल के उपलब्ध संसाधनों का इस्तेमाल संभल कर किया जाए।

एवरेस्ट की ऊंचाई पर कैंची चलाना चाहता है चीन

चीनी प्रतिनिधिमंडल ने नेपाल सरकार के प्रतिनिधियों से एवरेस्ट की आधिकारिक ऊंचाई 8848 मीटर से घटाकर 8844.5 मीटर करने का आग्रह किया। चीन इसलिए ऐसा करना चाहता है कि उसके यहां पाठ्य पुस्तकों और अन्य अभिलेखों में एवरेस्ट की यही ऊंचाई दर्ज है। चीन का मानना है कि एवरेस्ट की वास्तविक ऊंचाई यही है। शेष ऊंचाई पर केवल बर्फ की परत ही है।

दुनिया का सर्वोच्च शिखर एवरेस्ट नेपाल और चीन अधिकृत तिब्बत की सीमा पर स्थित है। नेपाल में इसे सागरमाथा, तिब्बत में चोमोलंगमा और चीन में कोमोलंगमा नाम से जाना जाता है। 1865 में इस शिखर का नाम भारत के पूर्व सर्वेयर जनरल जार्ज एवरेस्ट के नाम पर किया गया था। जार्ज एवरेस्ट के सहयोगी रहे राधाकांत सिकदर ने ऊंचाई मापक यंत्रों और गणितीय पद्धति के आधार पर 1852 में एवरेस्ट की सही ऊंचाई 8848 मीटर आंकी थी। तब इसे 'शिखर–15' नाम दिया गया था।

जानकारों के अनुसार चीन के प्रतिनिधिमंडल इस प्रकार का आग्रह पहले भी कर चुके हैं।

वनों के अस्तित्व पर बढ़ता खतरा

वायुमंडल से कार्बन डाई आक्साइट, कार्बन मोनो आक्साइड, सीएएफसी जैसी जहरीली गैसों को सोखकर धरती पर रह रहे असंख्या जीवधारियों को प्राण वायु आक्सीजन देने वाले जंगल आज खुद अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं। भारत में जंगलों के संरक्षण के लिए सक्रिय संस्था 'तरुमित्र' से जुड़े फादर राबर्ट के अनुसार वर्तमान समय में किसी व्यक्ति को जिंदा रहने के लिए जितनी आक्सीजन की जरूरत है वह उसे 16 बड़े–बड़े पेड़ों से मिल सकती है लेकिन पेड़ों की अंधाधुंध कटाई से उनकी संख्या दिनों दिन कम होती जा रही है।

भारत में प्रति 36 लोगों के लिए एक पेड़ है। कोलकाता जैसे महानगर में 15 हजार लोगों के लिए एक पेड़ है। पटना शहर में 1988 तक प्रति ढाई हजार लोगों के लिए पेड़ था आज अब चार हजार व्यक्तियों पर एक पेड़ है। स्थिति काफी दयनीय है। लेकिन मानव है अपने स्वार्थ के लिए दिन प्रति दिन वनों की कटाई करता जा रहा है। स्थिति काफी गंभीर है जिस पर आज सभी को चिंता करनी चाहिए।

महंगाई की मार अब आस्था पर भी

देश में आम व्यक्ति पहले से ही महंगाई से परेशान है लेकिन अब उसे भगवान की पूजा करने पर भी ज्यादा पैसे देने होंगे। जहां खाद्य सामग्री और जरूरत की चीजों के बढ़ते दामों ने लोगों की जेब को तो खाली कर ही दिया, अब महंगाई ने आस्थाओं पर सेंध लगाना शुरू कर दिया है।

हिंदुओं के सर्वोच्च तीर्थ के रूप में मान्यता प्राप्त भगवान विष्णु के धाम बद्रीनाथ में होने वाली अधिकारिक पूजा के रेट भी महंगे हो गए हैं। बद्रीनाथ–केदारनाथ मंदिर समिति ने पूजा की वर्तमान दरों में करीब 40 फीसदी तक बढ़ा दिए हैं।

बढ़ रहा है पेय जल संकट

स्वच्छ पेय जल पर आपका अधिकार जीवन का अधिकार है। यदि यह आपको नहीं मिल रहा तो समझिए आपसे जीने का अधिकार छीना जा रहा है।

आज 2,16,968 गांवों के लोग प्रदूषित जल पी रहे हैं जिसमें 5,029 नाइट्रेट से 31,306 गांव फ्लोराइड से, पानी में नमक की अधिकता से 23,495 गांव, आयरन से 1,18088 गांव, आर्सेनिक से 5,029 गांव और अन्य कारणों से 25,092 गांव प्रभावित है। यह भयावह सच्चाई का आइना है।

वर्तमान समय में कोई भी सरकार नागरिक को स्वच्छ जल प्रदान करने में असमर्थ है। आखिर कब लोगों को स्वच्छ पेयजल पानी प्राप्त होगा।

वैश्विक विनिमय दर पर संकट का खतरा

वैश्विक आर्थिक संकट के बादल अब छंटने लगे हैं लेकिन विशेषज्ञों का मानना है कि दुनिया के सामने अब विनिमय दर का संकट खड़ा हो सकता है। यह समस्या वित्तीय संकट दूर करने के लिए किए गए कुछ गलत उपायों के कारण ही खड़ी होने वाली है।

एक अरब डालर देगा विश्व बैंक

विश्व बैंक ने भारत में प्राथमिक शिक्षा के विस्तार और इंजीनियरिंग शिक्षा को और बेहतर बनाने के लिए दो परियोजनाओं के लिए 1.05 अरब डॉलर की आर्थिक मदद देने की मंजूरी दी है।

क्या फूट जायेगा चीनी बुलबुला

आज दुनिया में इस विषय पर चर्चा चल रही है कि क्या चीनी अर्थव्यवस्था जो दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था है, उसका बुलबुला फूट सकता है कि नहीं. . . . . हालांकि वर्ष 2010 में तो चीनी अर्थव्यवस्था के बुलबुले के फटने की संभावना कम है। लेकिन लगातार बढ़ते घाटे और इसके फलस्वरूप बढ़ती मुद्रा की पूर्ति, चीनी केन्द्रीय बैंक को मजबूर कर देगी कि वह साख नियंत्रण के ठोस कदम उठाये। जिसके फलस्वरूप वर्ष 2011 में चीनी बुलबुला फूट भी सकता है।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

लगभग पूरी दुनिया के बाजारों पर आज चीनी माल छाया हुआ है। लैपटॉप से लेकर पेन ड्राइव, टेलीविजन, मोबाईल इत्यादि इलेक्ट्रॉनिक सामान, खिलौने, घड़ियों आदि तमाम प्रकार की वस्तुओं पर 'मेड इन चाईना' की मोहर दिखाई देती है। पुल निर्माण हो अथवा टेलिफोन एक्सचेंज, बिजली घर हो अथवा अन्य प्रकार के ढ़ांचागत निर्माण आज भारत में ही नहीं दुनिया भर के देशों में चीनी कंपनियां बड़े स्तर पर ठेके ले रहे हैं। ऐसे में पिछले दो दशकों से चीनी अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ रही है। वर्ष 2009 के अंतिम माह में चीनी अर्थव्यवस्था की विकास दर 10.7 प्रतिशत थी। इस वर्ष भी इसकी विकास दर 12.5 प्रतिशत रहने की संभावना है।

शायद अर्थव्यस्था में अत्यधिक तेजी आज चीनी नीति निर्माताओं के लिए चिंता का विषय बनी हुई है। पूर्व में चीनी अर्थव्यवस्था केन्द्रीय योजना के आधार पर सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के द्वारा संचालित होती थी। पिछले लगभग दो दशकों से यह तेजी से बाजार के रास्ते पर चल रही है, हालांकि अभी भी चीनी सरकार का अर्थव्यस्था पर प्रभावी नियंत्रण बना हुआ है फिर भी बाजार भी चीनी अर्थव्यस्था का महत्वपूर्ण अंग बन चुका है।

बाजार आधारित पूंजीवादी अर्थव्यस्था की एक विशेषता होती है कि ऐसी अर्थव्यस्था में चाहे घरेलू मांग हो अथवा विदेशी मांग उसकी पूर्ति करते हुए अतिरिक्त क्षमता का और नये प्रकार के उत्पादों का निर्माण बाजार पर पकड़ बनाये रखने के लिए जरूरी होता है। लेकिन यदि मांग में व्यवधान आता है तो उस कारण से इस सृजित क्षमता का भरपूर उपयोग नहीं हो पाता। वैश्विक मंदी के चलते चीन भी आज विदेशों से आने वाली मांग की कमी से जूझ रहा है और विदेशों से आने वाली मांग की क्षति पूर्ति घरेलू मांग से हो रही है। हम जानते हैं कि विदेशी मांग के साथ–साथ घरेलू मांग ने भी चीन की अर्थव्यस्था को तेजी देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अर्थव्यवस्था की यह तेजी सरकारी बैंको की अंधाधुंध साख निर्माण और सरकार द्वारा भारी सहायता देने से है। दुनिया में मंदी का दौर है, और चीन की आर्थिक संवृद्धि के आंकड़े साफ इंगित करते हैं कि अर्थव्यस्था में उत्पादन अभी भी तेजी से बढ़ रहा है, जिसके चलते उसके पास अपना माल दूसरे देशों में 'डंप' करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं है। अगर ऐसा होता है तो दूसरे देश जवाबी कार्यवाही करेंगे और येन केन प्रकारेण अपने देश में आने से रोकेंगे। ऐसे में पहले से अतिरिक्त क्षमता की समस्या से जूझ रही चीनी अर्थ व्यवस्था के मंदी की चपेट में आने की पूरी संभावना है। इसका असर चीनी शेयर बाजार पर भी पड़ने वाला है। जानकारों का कहना है कि चीनी शेयरों

चीनी सरकार भी यह मान रही है कि आज चीन के सार्वजनिक उद्यम अतिरिक्त क्षमता की समस्या से जूझ रहें हैं। हम जानते हैं कि अमरीका के बाद चीन धातुओं के उपयोग में दूसरा सबसे बड़ा देश है। धातुओं की घटती मांग के चलते, उनकी कीमत में कमी, चीनी अर्थव्यवस्था में उतराव की ओर इंगित कर रही है।

की खरीद न की जाये क्योंकि उनका भविष्य अनिश्चित है।

आज दुनिया में इस विषय पर चर्चा चल रही है कि क्या चीनी अर्थव्यवस्था जो दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था है, उसका बुलबुला फूट सकता है कि नहीं। यह बात यूं तो बहुत दिनों से किसी न किसी रूप में बहस का मुद्दा रही है, लेकिन चीन के केन्द्रीय बैंक, पीपुल्स बैंक ऑफ चाईना द्वारा एक ही माह में लगातार दूसरी बार अपनी वैधानिक रक्षित अनुपात में आधे प्रतिशत को वृद्धि करते हुये उसे 16.5 प्रतिशत कर देने से इस बहस में तेजी आई है। उधर चीन की सरकार ने प्रांतो की सरकारों के ऋणों के आधिक्य पर रोक तो लगाई है, दूसरा घर खरीदने वालों के लिए उनकी हिस्सेदारी में भी इजाफा किया है और डवेलपरों के लिये पूंजी की अनिवार्यता भी बढ़ा दी गई है। ये सब उपाय गृहनिर्माण के क्षेत्र के विकास पर अंकुश तो लगायेंगे ही, देश में आंतरिक मांग पर भी भारी असर डालेंगे। किसी भी देश मे आंतरिक मांग, वहां की आर्थिक संवृद्धि को प्राथमिक शर्त होती है और यह बात चीन पर और भी ज्यादा लागू होती है।

सरकार ने तमाम कदम इसलिये उठाये हैं क्योंकि वह देश में लगातार बढ़ती मुद्रा की पूर्ति से चिंतित हैं। हालांकि सरकारी आंकड़े मुद्रास्फीति तो कम ही बता रहे हैं, लेकिन हाल ही के महीनों में कीमतों में वृद्धि तेज हुई है। मुद्रा की पूर्ति में 27 प्रतिशत वृद्धि और साख में 34

प्रतिशत वृद्धि इसका मुख्य कारण बताया जा रहा है। संभावित मुद्रास्फीति के डर से, व्यापार चक्र में तेजी पर अंकुश लगाने के चीनी सरकार के प्रयास विकास पर भी अंकुश लगाने का काम कर सकते हैं, और देश में आंतरिक मांग पर इसका असर पड़ सकता है। हालांकि वर्ष 2010 में तो चीनी अर्थव्यवस्था के बुलबुले के फटनें की संभावना कम है। लेकिन लगातार बढ़ते घाटे और इसके फलस्वरूप बढ़ती मुद्रा की पूर्ति, चीनी केन्द्रीय बैंक को मजबूर कर देगी कि वह साख नियंत्रण के ठोस कदम उठाये। जिसके फलस्वरूप वर्ष 2011 में चीनी बुलबुला फूट भी सकता है।

'पीपुल्स बैंक ऑफ चाईना' का वर्तमान कदम, अभी उस क्रम में पहला कदम ही है। आगे आने वाले माह में उसे ऐसे और कदम उठाने पड़ेगे, जिसका घरों की मांग, घरेलू उपकरणों और अन्य उपभोक्ता वस्तुओं की मांग सहित चीन की घरेलू मांग पर भारी असर पड़ सकता हैं, क्योंकि बैंकों के ऋण पहले से मंहगे और मुश्किल हो जायेंगे।

चीनी सरकार भी यह मान रही है कि आज चीन के सार्वजनिक उद्यम अतिरिक्त क्षमता की समस्या से जूझ रहें हैं। हम जानते हैं कि अमरीका के बाद चीन धातुओं के उपयोग में दूसरा सबसे बड़ा देश है। धातुओं की घटती मांग के चलते, उनकी कीमत में कमी, चीनी अर्थव्यवस्था में उतराव की ओर इंगित कर रही है। चीनी नीति निर्माताओं का कहना है कि सरकारी क्षेत्र के उद्यमों (जो सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 30 प्रतिशत उत्पादन करते हैं) की लापरवाही के कारण समस्याएं हैं। अतिरिक्त क्षमता की भी समस्या है लेकिन चीन सरकार के ढ़ांचागत निवेश, सरकारी कर्जे का कम अनुपात, बैंकों के 40 प्रतिशत उधारों का सरकारी ढ़ांचागत निवेश में उधार आदि ऐसे तथ्य हैं, जो चीनी अर्थव्यवस्था के बुलबुले को फटने से रोकेंगे। ऐसा संभव होगा या नहीं, यह भविष्य ही बतायेगा लेकिन आने वाला समय चीनी अर्थव्यवस्था के लिए चुनौती भरा होगा, यह निश्चित ही है। ❑

आयातित शिक्षा पर सवाल

अगर कृषि अनुसंधान और शिक्षा में अमेरिकी माडल इतना ही अच्छा है तो किसान आज विपत्ति में क्यों हैं और कृषि बर्बादी के कगार पर क्यों पहुंच गई है। एक राष्ट्र के रूप में हमें इसकी पड़ताल करनी चाहिए और पीछे मुड़कर देखना चाहिए। इसमें कुछ बुनियादी गड़बड़ी है . . .भारत में बड़ी संख्या में ऐसे लोग हैं जो पूरी तरह अमेरिकापरस्त हैं। वे रहते तो भारत में हैं किंतु सपने अमेरिकी देखते हैं। वे भारत में उच्च शिक्षा व्यवस्था में खामियां तलाशते हैं।

■ देविन्दर शर्मा

मैं आपका ध्यान उस नुकसान की ओर खींचना चाहूंगा, जो आयातित कृषि शिक्षा और अनुसंधान के कारण भारत को उठाना पड़ा है। पहला कृषि विश्वविद्यालय उत्तराखंड के पंतनगर में खोला गया था। इसके बाद से 50 से अधिक कृषि विश्वविद्यालय गठित किए जा चुके हैं।

कुछ साल पहले मुझे लंदन में एक बैठक में आमंत्रित किया गया था, जिसमें विमर्श का मुद्दा था कि इंग्लैंड विकासशील देशों में टिकाऊ कृषि को प्रोत्साहन कैसे दे सकता है। यह बैठक इंग्लैंड के तत्कालीन गृह सचिव हिलेरी बेन द्वारा बुलाई गई थी, जिसमें करीब 15 लोगों ने भाग लिया था। इंग्लैंड के कई संगठनों ने अन्य विकासशील देशों के साथ–साथ भारत में टिकाऊ कृषि में सहयोग देने संबंधी अनेक प्रस्ताव और परियोजनाएं पेश कीं। इसके बाद हिलेरी बेन ने मुझसे सुझाव मांगे।

मैंने कहा, मेरी राय में ब्रिटिश कृषि पूरी दुनिया में पर्यावरण को सबसे अधिक नुकसान पहुंचाने वाली कृषि व्यवस्था में से एक है। मुझे नहीं लगता कि आपके विश्वविद्यालय और निजी संस्थान इतने काबिल हैं कि वे भारतीय कृषकों और संगठनों को टिकाऊ खेती के बारे में कुछ सिखा सकें।

यह सुनकर हिलेरी बेन चौंक गए और मुझसे पूछा कि इंग्लैंड की कृषि व्यवस्था में सुधार कैसे संभव है। मैंने जवाब दिया, इंग्लैंड की सरकार को भारतीय किसानों को वहां बुलाना चाहिए, जिन्होंने टिकाऊ खेती व्यवस्था में शानदार प्रदर्शन किया है। और उनसे ही सीखने की कोशिश करनी चाहिए। कहने की आवश्यकता नहीं है कि बैठक वहीं समाप्त हो गई।

इससे पहले हम कपिल सिब्बल के तुरही बजाकर विदेशी विश्वविद्यालयों को भारत में अपने कैंपस खोलने की अनुमति देने के मुद्दे पर आएं, मैं आपका ध्यान उस नुकसान की ओर खींचना चाहूंगा, जो आयातित कृषि शिक्षा और अनुसंधान के

कारण भारत को उठाना पड़ा है। पहला कृषि विश्वविद्यालय उत्तराखंड के पंतनगर में खोला गया था। इसके बाद से 50 से अधिक कृषि विश्वविद्यालय गठित किए जा चुके हैं। कृषि अनुसंधान और शिक्षा के क्षेत्र में 50 साल की उपलब्धियों से बेहतर कोई अन्य पहलू नजरिए में परिवर्तन को स्पष्ट नहीं कर सकता।

कृषि अनुसंधान व शिक्षा व्यवस्था का ढांचा अमेरिका की आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार किया गया था न कि भारतीय कृषि की समस्याओं को दूर करने के लिहाज से। हमें बताया गया कि हमारी कृषि निम्न स्तरीय, पिछड़ी और नाकारा है। यह हमारे कृषि विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाता है। इन विश्वविद्यालयों में अमेरिकी कृषि पर आधारित पाठ्यक्रम होता है। बताया जाता है कि अगर आप भारतीय कृषि को सुधारना चाहते हैं तो अमेरिकी कृषि माडल को अपनाना होगा।

जबकि हमने अनुभव से सीखा है कि इसी रास्ते पर चलने से हम आज कृषि के सबसे बड़े और गहरे संकट में फंस गए हैं। ऐसे बहुत से लोग हैं जो यह सोचते हैं कि अमेरिकी कृषि अनुसंधान और शिक्षा व्यवस्था से भारत को बड़ा लाभ हुआ है। मैं इससे इनकार नहीं करता। आखिरकार, हरित क्रांति हुई और इससे देश खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हुआ। विद्वान इस पर माथापच्ची कर रहे हैं कि हरित क्रांति कितनी सफल रही, किंतु इस तथ्य पर वे विचार नहीं कर रहे हैं कि इसी प्रौद्योगिकी की वजह से वर्तमान कृषि संकट पैदा हुआ है। चाहे हम स्वीकार करें या न करें, सच्चाई यही है कि यूएस एजेंसी फार इंटरनेशनल

डेवलपमेंट (यूएसएआईडी) के तहत अमेरिका में जिस तरह शिक्षण संस्थान के लिए सरकारी जमीन अनुदान में दी जाती है, ऐसा करने पर भारत में खेतों में अभूतपूर्व खूनखराबा हुआ है।

हम नहीं कह सकते कि भारत में जिस तरह की कृषि अनुसंधान और शिक्षा व्यवस्था जारी है, उस पर भयावह कृषि संकट की जिम्मेदारी नहीं है। एक देश में, जहां कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में दुनिया का सबसे विशाल सार्वजनिक ढांचा है, किसान आत्महत्या क्यों कर रहे हैं और कृषि को त्यागने पर विवश हैं? अगर कृषि अनुसंधान और शिक्षा में अमेरिकी माडल इतना ही अच्छा है तो किसान आज विपत्ति में क्यों हैं और कृषि बर्बादी के कगार पर क्यों पहुंच गई है।

एक राष्ट्र के रूप में हमें इसकी पड़ताल करनी चाहिए और पीछे मुड़कर देखना चाहिए। इसमें कुछ बुनियादी गड़बड़ी है। कृषि, चिकित्सा विज्ञान, इंजीनियरिंग या प्रबंधन क्षेत्र कोई भी हो, हमें सिखाया जाता है कि हम जो भी करते हैं वह निम्न स्तरीय, पिछड़ा और बेकार है। ऐसे में हमारे पास विकास का पश्चिमी माडल अपनाने के अलावा कोई चारा नहीं बचता, यहां तक कि प्रबंधन के क्षेत्र में भी।

हमारे इंडियन इंस्टीट्यूट

ऐसे बहुत से लोग हैं जो यह सोचते हैं कि अमेरिकी कृषि अनुसंधान और शिक्षा व्यवस्था से भारत को बड़ा लाभ हुआ है। मैं इससे इनकार नहीं करता। आखिरकार, हरित क्रांति हुई और इससे देश खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हुआ। विद्वान इस पर माथापच्ची कर रहे हैं कि हरित क्रांति कितनी सफल रही, किंतु इस तथ्य पर वे विचार नहीं कर रहे हैं कि इसी प्रौद्योगिकी की वजह से वर्तमान कृषि संकट पैदा हुआ है।

फार मैनेजमेंट (आईआईएम) और आईआईटी भी यही कर रहे हैं। ये संस्थान जनता के पैसे से निजी क्षेत्र के लिए छात्रों को शिक्षित करते हैं। मैं अकसर सोचता हूँ कि अगर आईआईएम के छात्र को निजी क्षेत्र में ही जाना है तो उद्योग जगत इन संस्थानों को वित्तीय सहायता क्यों नहीं प्रदान करता? इन संस्थानों के वित्तीय पोषण के लिए करदाताओं का पैसा क्यों खर्च होना चाहिए?

भारत में ऐतिहासिक शुचिता की बेहद जरूरत है। आईआईएम और आईआईटी जैसे संस्थानों से पैसा बचाकर कृषि व स्वास्थ्य के क्षेत्र में श्रेष्ठ केंद्र स्थापित करने में खर्च किया जा सकता है। आयातित जोखिमभरी और गैरजरूरी प्रौद्योगिकी के बजाए कृषि विश्वविद्यालयों की पुनर्संरचना की आवश्यकता है, ताकि ये किसानों के लिए अधिक सार्थक व उपयोगी बन सकें और विद्यमान टिकाऊ प्रौद्योगिकी में सुधार लाया जा सके।

भारत में बड़ी संख्या में ऐसे लोग हैं जो पूरी तरह अमेरिकापरस्त हैं। वे रहते तो भारत में हैं किंतु सपने अमेरिकी देखते हैं। वे भारत में उच्च शिक्षा व्यवस्था में खामियां तलाशते हैं और दोयम दर्जे के अमेरिकी, यूरोपीय और आस्ट्रेलियाई कालेज व विश्वविद्यालयों के देश की शिक्षा व्यवस्था पर छा जाने में कुछ गलत नहीं मानते। कोई भी शिक्षा व्यवस्था में सड़न को दूर नहीं करना चाहता। यह सड़न दोयम दर्जे के विदेशी विश्वविद्यालय आयात करने से दूर नहीं होगी।

आप एक बुराई को दूसरी बुराई से खत्म नहीं कर सकते। देश के सामने पहली चुनौती विद्यमान उच्च शिक्षा व्यवस्था का कायाकल्प करना है। इसकी शुरुआत शैक्षिक पाठ्यक्रम के साथ–साथ शिक्षकों

के आकलन की प्रक्रिया में मूलभूत बदलाव लाकर की जा सकती है। साथ ही, पाठ्यक्रम को इस रूप में पुनर्निधारित किया जाना चाहिए कि यह भारत की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

हम इसे पसंद करें या न करें, आईआईएम जैसे प्रतिष्ठित संस्थानों में भी शिक्षकों का स्तर भयावह रूप से गिरा हुआ है। कुछ अपवादों को छोड़ दें, तो अधिकांश उपयुक्त मानदंडों पर खरे नहीं उतरते। उपकुलपतियों का हालत तो और भी दयनीय है।

देश के सामने पहली चुनौती विद्यमान उच्च शिक्षा व्यवस्था का कायाकल्प करना है। इसकी शुरुआत शैक्षिक पाठ्यक्रम के साथ–साथ शिक्षकों के आकलन की प्रक्रिया में मूलभूत बदलाव लाकर की जा सकती है। साथ ही, पाठ्यक्रम को इस रूप में पुनर्निधारित किया जाना चाहिए कि यह भारत की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

पिछले 15 वर्षों से मैं ऐसे उपकुलपति की तलाश में हूँ, जो विश्वास पैदा कर सके। उच्च शिक्षण संस्थानों में इस कदर कमजोर अध्यक्षों के रहते चमत्कार की आशा करना बेमानी है। कपिल सिब्बल उच्च शिक्षा से जुड़े महत्वपूर्ण चुनौतियों से कन्नी काट रहे हैं। वह कारपोरेट खेल में शामिल हो गए हैं जो 'बी ग्रेड' के विदेशी विश्वविद्यालय तक ऐसे छात्रों की पहुंच बनाना चाहता है, जिनके पास पैसा है।

हम पहले ही देख रहे हैं कि जो छात्र प्रतिष्ठित भारतीय संस्थानों में प्रवेश नहीं ले पाते हैं वे विदेशी विश्वविद्यालयों का रुख करते हैं। ❑

कारों की संख्या घटाने से होगा आर्थिक विकास

कार के अधिकाधिक निर्माण और उपयोग के पीछे सोच थी कि कार उपलब्ध होने से लोग अपने गंतव्य तक शीघ्र पहुंच जायेंगे। जो समय बस स्टैंड पर खड़े रहने, बस बदलने और बस स्टैन्ड से रिक्शा लेकर गंतव्य तक पहुंचने में लग जाता है वह बच जायेगा और लोग बिना थके शीघ्र पहुंच कर उस बचे हुये समय का उत्पादक प्रयोग कर सकेंगे। कार के मालिकों के जीवन स्तर में भी सुधार होगा . . . परन्तु कार की संख्या में वृद्धि का ऐसा सार्थक प्रभाव दृष्टिगत नहीं होता है। आज शहरों की सड़कों पर ट्रैफिक जाम लग रहे हैं।

■ डा भरत झुनझुनवाला

ट्रैफिक जाम का एकमात्र हल शहरों के भीड़ क्षेत्र में कार चलाने पर विशेष टैक्स लगाना है। इसे ''भीड़ टैक्स'' का नाम दिया जा सकता है। लंदन शहर के केन्द्र में कार चलाने को एक दिन का 500 रू0 का परमिट खरीदना पड़ता है। स्टाकहोम, सिंगापुर एवं सियोल जैसे महानगरों में भी इसी प्रकार के टैक्स लगाये गये हैं और सार्थक परिणाम सामने आये हैं। हमें सभी शहरों के चिन्हित इलाकों में प्रवेश पर 1000 रू प्रतिदिन का परमिट लागू करना चाहिये।

आधुनिक अर्थशास्त्र के प्रणेता एडम स्मिथ ने सिद्धांत बताया था कि खुले बाजार में लोगों द्वारा अपना व्यक्तिगत हित साधने में सामाजिक हित अनायास ही स्थापित हो जाता है। व्यापारी का लक्ष्य व्यक्तिगत लाभ कमाना मात्र होता है। परन्तु लाभ कमाने की प्रक्रिया में व्यापारी सस्ते माल का उत्पादन करता है। फलस्वरूप उपभोक्ता को सस्ता माल हासिल हो जाता है। जैसे टैक्सी ड्राइवर गाड़ी में सीएनजी महज इसलिये फिट करता है कि ईंधन की लागत कम हो जाये। परन्तु समयक्रम में सीएनजी का किराया सरकार द्वारा कम निर्धारित किया जाता है और यात्री को टैक्सी का खर्च कम देना पड़ता है। ध्यान देने की बात है कि अनेकों वर्षों से सीएनजी तकनीक की जानकारी टैक्सी चालकों को थी परन्तु ये सीएनजी नहीं लगवाते थे। कुछ वर्ष पूर्व दिल्ली जैसे शहरों की सरकार ने बसों में सीएनजी लगवाना अनिवार्य कर दिया तथा तेल कम्पनियों को सीएनजी पम्प लगाने के निर्देश दिये। सरकार के इस दबाव में टैक्सी चालकों ने सीएनजी लगवाया और जनहित हासिल हुआ। बाजार को खुला छोड़ देने से सीएनजी नहीं लगाया गया। सरकार के द्वारा दिशा देने पर टैक्सी मालिकों ने अपने स्वार्थ को विशेष दिशा में मोड़ा और जनहित स्थापित हुआ। तात्पर्य यह कि एडम स्मिथ के फार्मूले का अर्थ सरकार की समाप्ति नहीं बल्कि विशेष प्रकार का नियंत्रण है। समुचित नियंत्रण के अभाव में एडम स्मिथ का फार्मूला फेल हो जाता है जैसा कि अनेकों वर्षों तक टैक्सी चालकों ने सीएनजी फिट नहीं करवाया था।

विशेष बात यह है कि सीएनजी फिट करने से देश का सकल घरेलू उत्पाद घटता है। मान लीजिये चेन्नई में प्रतिदिन एक लाख किलोमीटर टैक्सी चलती है। पेट्रोल से चलने वाली टैक्सी का किराया 8 रूपये प्रति किलोमीटर है जबकि सीएनजी का किराया 5 रूपये प्रति

किलोमीटर पड़ता है। ऐसे मे दैनिक सकल घरेलू उत्पाद में गिरावट आती है।

यह बात आटोमोबाइल उद्योग पर विशेष रूप से लागू होती हैं। कार के अधिकाधिक निर्माण और उपयोग के पीछे सोच थी कि कार उपलब्ध होने से लोग अपने गंतव्य तक शीघ्र पहुंच जायेंगे। जो समय बस स्टैंड पर खड़े रहने, बस बदलने और बस स्टैन्ड से रिक्शा लेकर गंतव्य तक पहुंचने में लग जाता है वह बच जायेगा और लोग बिना थके शीघ्र पहुंच कर उस बचे हुये समय का उत्पादक प्रयोग कर सकेंगे। कार के मालिकों के जीवन स्तर में भी सुधार होगा। बच्चे स्कूल समय से पहुंच सकेंगे और गृहणी शापिंग के लिये आसानी से जा सकेगी। आटोमोबाइल उद्योग भी लाभ कमायेगा। परन्तु कार की संख्या में वृद्धि का ऐसा सार्थक प्रभाव दृष्टिगत नहीं होता है। आज शहरों की सड़कों पर ट्रैफिक जाम लग रहे हैं। कार के उत्पादन का उद्देश्य था कि लोग अपने गंतव्य स्थान पर शीघ्र एवं आरामपूर्वक पहुंच सकेंगे किन्तु हो रहा है इसके ठीक विपरीत। गंतव्य तक पहुंचने में समय ज्यादा लग रहा है और जनता कार में बैठे काला पानी की सजा अनायास ही भोग रही है। पिछले समय देश के तीन महानगरों में यात्रा करने का अवसर प्राप्त हुआ था। कोलकाता में हावड़ा स्टेशन से बालीगंज पहुंचने में एक घंटा लगा। बंगलूर में कृष्णराजपुरम् से बसवनगुड़ी पहुंचने में डेढ़ घंटे लगे। दिल्ली में निजामुद्दीन से करोलबाग पहुंचने में दो घन्टे लगे। पूर्व में ये यात्राएं इससे तिहाई समय में हो जाती थीं। दूसरे देशों में भी ऐसी ही परिस्थिति है। आस्ट्रेलिया में परामत्ता से सिडनी पहुंचने में सौ वर्ष पूर्व घोड़ा गाड़ी से एक घंटे का समय लगता

था। आज इससे ज्यादा समय कार से पहुंचने में लगता है। अनुमान है कि आस्ट्रेलिया में 2020 तक कार यात्रा का समय वर्तमान से दुगुना हो जायेगा। जिस प्रकार अधिक भोजन करने से अपच हो जाता है उसी प्रकार कार की संख्या अधिक हो जाने से ट्रैफिक का अपच हो गया है। यात्रा का औसत समय घटने के स्थान पर बढ़ गया है।

ट्रैफिक जाम से केवल कार में बैठे यात्री ही परेशान नहीं होते हैं बल्कि स्कूटर और साइकिल सवारों को भी परेशान होना पड रहा है। कहीं–कहीं पैदल चलना भी संभव नहीं रह गया है। देश के लिये यह हर प्रकार से घाटे का सौदा है। सड़कों एवं कारों में हमारी पूंजी लग रही है। यात्रा में समय ज्यादा खप रहा है। उपर से सामान्य यात्रियों को भी परेशानी हो रही है। आंकड़ों में आर्थिक विकास अवश्य दिख रहा है चूंकि कार ज्यादा संख्या में बिक रही है। जाम में खड़ी कार का इंजन चालू रहने के कारण पेट्रोल फूंका जा रहा है जो कि हमारे सकल उत्पाद में जुड़ जाता है। परन्तु यह विकास नाकाम है।

दिल्ली में निजामुद्दीन से करोलबाग पहुंचने में दो घन्टे लगे। पूर्व में ये यात्राएं इससे तिहाई समय में हो जाती थीं। दूसरे देशों में भी ऐसी ही परिस्थिति है। आस्ट्रेलिया में परामत्ता से सिडनी पहुंचने में सौ वर्ष पूर्व घोड़ा गाड़ी से एक घंटे का समय लगता था। आज इससे ज्यादा समय कार से पहुंचने में लगता है।

कार के इंजन की नई उन्नत तकनीको से समस्या और बढ़ती जा रही है। सत्तर के दशक में एम्बेसडर कार से 11 किलोमीटर प्रति लीटर का एवरेज मिलता था। आज के नये माडल से 20 किलोमीटर का एवरेज मिलने लगा है। इससे यात्रा का खर्च कम हो गया है, लोग

(शेष पृष्ठ 32 पर)

मरीजों से खिलवाड़

एक जमाना था जब भारत में चिकित्सक को भगवान की संज्ञा दी जाती थी। वक्त के साथ व्यावसायिकता के नाम पर धीरे–धीरे कई तरह की अनैतिक प्रथाओं ने इस क्षेत्र में जड़े जमा ली हैं। कई छोटी कंपनियों का मानना है कि दवाओं के दामों में पचास फीसदी की कमी आसानी से की जा सकती है, अगर चिकित्सकों को तोहफे देना बंद कर दिया जाए। कंपनियों के बीच डाक्टरों से अपनी दवाईयां ज्यादा लिखवाने की होड़ मची रहती है। कंपनियों की तरह से लुटाया जा रहा यह पैसा आखिरकार मरीज की जेब से ही निकाला जाता है।

■ निरंकार सिंह

बड़े अस्पतालों के भी कई डॉक्टर कंपनियों के प्रलोभन में एक मरीज पर कई दवाओं से इलाज करते हैं। इसके लिए कुछ डाक्टर तो अस्पताल प्रशासन को भी गुमराह करते हैं। पर अब भारतीय चिकित्सा परिषद् ने एक नई आचार संहिता बनाकर दवा कंपनियों के पैसे पर डाक्टरों के ऐश करने पर रोक लगा दी है...लेकिन आचार संहिता का उल्लंघन करने वाले डाक्टरों को क्या सजा मिलेगी, इसका कोई उल्लेख नहीं है।

दवाओं की बिक्री अन्य उपभोक्ता सामानों की तरह विज्ञापित कर नहीं की जाती है। इसकी बिक्री चिकित्सकों की पर्चियों पर आधारित होती है। इसके पीछे सोच यह है कि आम उपभोक्ता या रोगी दवाओं के रसायनों के असर से अपरिचित रहने के कारण उसका चयन नहीं कर सकता। इसीलिए दवा कंपनियां अपनी दवाओं की अधिकाधिक बिक्री के लिए डाक्टरों को विभिन्न प्रकार के उपहार और लालच देकर लुभाती रहती हैं। इसलिए बड़े अस्पतालों के भी कई डॉक्टर कंपनियों के प्रलोभन में एक मरीज पर कई दवाओं से इलाज करते हैं। इसके लिए कुछ डाक्टर तो अस्पताल प्रशासन को भी गुमराह करते हैं। पर अब भारतीय चिकित्सा परिषद् ने एक नई आचार संहिता बनाकर दवा कंपनियों के पैसे पर डाक्टरों के ऐश करने पर रोक लगा दी है। दवाओं के असर पर निजी अध्ययन में भाग लेना या उनका समर्थन करना अथवा फिर किसी तरह की सेवाओं को स्वीकार करना अब डाक्टरों के लिए मुश्किल होगा। कुछ हफ्ते पहले दवा कंपनियों ने डाक्टरों को महंगे तोहफे देने के मामले में एक आचार संहिता बनायी थी। पर इस संहिता में डाक्टरों को रिश्वत देकर दवाइयां लिखवाने की अनैतिक कारगुजारी को लेकर साफ रूख लेने से बचाया गया था। साथ ही इसके प्रावधानों की कोई बाध्यता नहीं थी। भारत में दवा निर्माताओं के छह संघ काम करते हैं। उनमें से दो संघों ने इस संहिता से सहमति जाहिर नहीं की। छोटी और मझोली कंपनियों के संघ ने कहा था कि उल्लंघन करने वाली कंपनियों पर कानूनी कार्रवाई के साफ प्रावधान के बिना

सूरत बदलने वाली नहीं है।

पिछले साल की शुरूआत में सरकार ने दवा कंपनियों के संघ से स्वयं एक आचार संहिता बनाने और उसे कड़ाई से लागू करने को कहा था। सरकार ने चेतावनी दी थी कि अगर ऐसी कोई संहिता लागू नहीं पाती है तो वह कानून बनाने के लिए बाध्य होगी। मगर जब राज्यसभा में इस बाबत पूछा गया तो सरकार ने पहले वाली बात दोहरा दी, यानि कंपनियां खुद अपने लिए आचार संहिता बनायें। एक साल पहले जब सरकार ने दवा कंपनियों के संघ के विवेक पर सारा मसला छोड़ दिया था तब कहा जा सकता था कि उन्हें अपने कई व्यावसायिक नैतिकता को अपनाने का एक मौका दिया गया है। मगर इस बीच यह साफ हो चला है कि दवा कंपनियां गंभीर नहीं है। नई संहिता की बात तो दूर, पहले की आचार संहिता पर भी अमल नहीं किया। हाल ही में यह चौंकाने वाला तथ्य सामने आया है कि भारत में काम कर रही बहुराष्ट्रीय दवा कंपनियों में से करीब पच्चीस फीसदी ऐसी हैं जिन पर पिछले दिनों अमेरिका में इसी तरह के मामलों में भारी जुर्माना लगाया गया। याद रहे भारत के दवा बाजार में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की सत्तर फीसदी से ज्यादा की हिस्सेदारी है। इससे यह साफ हो जाना चाहिए कि इस मामले में दवा कंपनियों के विवेक के हवाले नहीं किया जा सकता, क्योंकि व्यावसायिक नैतिकता के तकाजे पर मुनाफे का गणित हावी हो गया है।

एक जमाना था जब भारत में चिकित्सक को भगवान की संज्ञा दी जाती थी। वक्त के साथ व्यावसायिकता के नाम पर धीरे–धीरे कई तरह की अनैतिक प्रथाओं ने इस क्षेत्र में जड़े जमा ली हैं।

कई छोटी कंपनियों का मानना है कि दवाओं के दामों में पचास फीसदी की कमी आसानी से की जा सकती है, अगर चिकित्सकों को तोहफे देना बंद कर दिया जाए। कंपनियों के बीच डाक्टरों से अपनी दवाईयां ज्यादा लिखवाने की होड़ मची रहती है। कंपनियों की तरह से लुटाया जा रहा यह पैसा आखिरकार मरीज की जेब से ही निकाला जाता है। मामला टीवी सेट, फ्रिज, लैपटाप जैसे तोहफे देने तक सीमित नहीं है। दवा कंपनियां चिकित्सकों को मुफ्त में देश–विदेश की सैर कराती हैं, उन्हें महंगे होटलों में ठहरने का प्रलोभन दिया जाता है। बहुत सी विदेश यात्राएं सेमिनारों और अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में हिस्सा लेने की आड़ में करवाई जाती हैं। यहां तक कि डाक्टरों के परिवारजनों को भी विदेश ले जाने का चलन हो गया है। दवा कंपनियों और चिकित्सकों की मिली–भगत के जरिए अगर मरीजों की सेहत से खिलवाड़ हो रहा है तो सरकार को चुप क्यों बैठे रहना चाहिए? अमरीका समेत दुनिया के ज्यादातर मुल्कों में इस बारे में कड़े कानून बनाए गए हैं। भारत में इस बावत कोई कानून न होने की वजह से यह अनैतिक कारोबार खुलेआम चल रहा है। दवा उद्योग जीवन रक्षा से ताल्लुक रखता है इसलिए इस क्षेत्र में बेलगाम मुनाफे के राज को बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए।

दवा कंपनियों और चिकित्सकों की मिली–भगत के जरिए अगर मरीजों की सेहत से खिलवाड़ हो रहा है तो सरकार को चुप क्यों बैठे रहना चाहिए? अमरीका समेत दुनिया के ज्यादातर मुल्कों में इस बारे में कड़े कानून बनाए गए हैं। भारत में इस बावत कोई कानून न होने की वजह से यह अनैतिक कारोबार खुलेआम चल रहा है।

दवा कंपनियों ने आचार संहिता का

जो मसौदा जारी किया था उससे साफ जाहिर था कि इस मामले को कंपनियों के विवेक पर नहीं छोड़ा जा सकता। दरअसल, व्यापारिक नैतिकता पर मुनाफे की हवस के हावी होने के कारण ही यह पूरा मसला उठा है। भारत के दो दवा निर्माता संघ एक ऐसी संहिता को पहले ही स्वीकार कर चुके हैं। पर उस पर कहीं अमल नहीं हुआ। इस संहिता में दवा निर्माताओं से अपेक्षा की गयी थी कि वे चिकित्सकों को नगद रकम, संगीत की सीडी, डीवीडी और अन्य इलेक्ट्रॉनिक चीजें देने और विदेश या मनोरंजन यात्राओं का इंतजाम करने से बचेंगे। मगर मसौदे में इस बात की पूरी गुंजाइश रखी गयी है कि किसी दूसरे नाम पर ये चीजें बदस्तूर चलती रह सके। मसलन, वैज्ञानिक सम्मेलन के नाम पर दवा निर्माता डाक्टरों की विदेश यात्राएं पहले की तरह प्रायोजित कर सकेंगे। वैज्ञानिक सम्मेलन में दवाओं के बारे में नई जानकारी को भी शामिल किया गया है। इसी तरह डाक्टरों के पेशे से किसी न किसी तरह से जुड़ी चीजों को तोहफे के रूप में देने की छूट दी गयी है। एक तरह से इस संहिता के जरिए डाक्टरों को दवा कंपनियों के खर्च पर विदेश भेजने की प्रथा को नैतिक जामा पहनाने की कोशिश की गयी थी।

पर अब भारतीय चिकित्सा परिषद् (एसीआई) ने चिकित्सा पेशेवरों की आचार संहिता शिष्टाचार और आचार नीति अधिनियम 2002 में संशोधन किया है और एक नई आचार संहिता बनाई है। इसके तहत कोई भी चिकित्सक दवा बनाने वाली कंपनियों या स्वास्थ्य देखभाल से जुड़े उद्योगों से उपहार या यात्रा सुविधाएं उपलब्ध नहीं कर सकेगा। कोई भी चिकित्सक दवा बनाने वाली कंपनियों या स्वास्थ्य देखभाल से जुड़े उद्योगों द्वारा प्रायोजित विशेष अनुसंधान कार्य में भाग ले सकता है लेकिन इसके लिए उसे उपयुक्त योग्य पदाधिकारी से मंजूरी सुनिश्चित करानी होगी। लेकिन आचार संहिता का उल्लंघन करने वाले डाक्टरों को क्या सजा मिलेगी, इसका कोई उल्लेख नहीं है। कड़े प्रावधानों के बिना इस पर रोक नहीं लगायी जा सकती है। ❑

सदस्यता सम्बन्धी सूचना

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीघ्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है।

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	100/–	1000/–
अंग्रेजी	100/–	1000/–

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

पता : **स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22**

ढुलमुल नीति छोड़ - चीन के प्रति सख्त रूख आवश्यक

स्वतंत्रता के बाद से ही हमारी सरकार ने अपने पड़ौसी देशों के प्रति बहुत ही ढुलमुल, अव्यावहारिक और आत्मघाती विदेश नीति अपना रखी है। हमारी सरकारों को शायद वास्तविक मित्र व छद्म मित्रों की पहचान नहीं रही या जानबूझ कर पहचानना नहीं चाहा। हिन्दी चीनी भाई–भाई और पंचशील के लुभावने नारों के पीछे छिपे खूनी पंजों से चीन ने पहले तिब्बत को निगला, तत्कालीन सरकार ने इसका विरोध करने के बजाय समर्थन किया।

■ छगनलाल बोहरा

स्वतंत्रता के बाद से ही हमारी सरकार ने अपने पड़ौसी देशों के प्रति बहुत ही ढुलमुल, अव्यावहारिक और आत्मघाती विदेश नीति अपना रखी है। हमारी सरकारों को शायद वास्तविक मित्र व छद्म मित्रों की पहचान नहीं रही या जानबूझ कर पहचानना नहीं चाहा। हिन्दी चीनी भाई–भाई और पंचशील के लुभावने नारों के पीछे छिपे खूनी पंजों से चीन ने पहले तिब्बत को निगला, तत्कालीन सरकार ने इसका विरोध करने के बजाय समर्थन किया जबकि भारतीय सेना के अधिकारियों तथा अनेक राष्ट्रवादी नेताओं ने चीन का विरोध करने का आग्रह नेहरूजी से किया था। 1962 में इसी रास्ते से भारत पर आक्रमण कर हमारी 43000 वर्ग किलोमीटर भूमि हथिया कर भारत के स्वाभिमान पर खुली चोट कर विश्वासघात किया।

तिब्बत, नेपाल और भूटान भारत के स्वाभाविक मित्र हैं। चीन और भारत के बीच इन राष्ट्रों का स्वतंत्र, शक्तिशाली और भारत के प्रति सौहार्दपूर्ण होना अत्यंत आवश्यक है। तिब्बत पर कब्जे से चीन को सीधे भारत पर आक्रमण करने का मार्ग मिल गया, दलाई लामा और हजारों तिब्बती नागरिकों ने भारत में शरण ली। आज तक चीन न तो तिब्बत को स्वायत्तता प्रदान करने को राजी है और न ही वह हथियाया हुआ भारतीय क्षेत्र लौटाने को तैयार है उलटा उसने अरुणाचल और कश्मीर पर भारतीय स्वामित्व को नकारना प्रारंभ कर दिया है। यहां तक कि भारत के प्रधानमंत्री और अभी हाल ही में दलाईलामा की अरुणाचल यात्रा का विरोध तथा कश्मीर को अलग क्षेत्र दिखाकर, वहाँ के लिए अलग वीजा जारी कर भारत के अंदररूनी मामलों में खुली दखल देने का दुस्साहस किया है। अधिकृत भारतीय क्षेत्र में तथा पाकिस्तान अधिकृत भारतीय क्षेत्र में सड़के बनाना, सेना और हथियारों की तैनाती, भारतीय क्षेत्र में घुसपैठ, नेपाल तथा भारत में माओवादियों को हथियार और धन देकर भारत में अस्थिरता फैलाने का प्रयास कर रहा है। आर्थिक मोर्चे पर भारत का शोषण करने के लिए सस्ते और घटिया उत्पादों से भारतीय बाजार को पाट दिया है जिससे प्रतिवर्ष हजारों करोड़ रूपयों का मुनाफा बटोर रहा है। हिमालय से निकलने वाली नदियों पर बांधों–सुरंगों आदि के माध्यम से जल प्रवाह चीन की ओर मोड़ने की परियोजनाएँ प्रारंभ कर दी है। इसी प्रकार बर्मा, श्रीलंका, पाकिस्तान को हर प्रकार की सैनिक, आर्थिक, आणविक मदद देकर भारत को चारों ओर से घेरने का प्रयास लम्बे समय से कर

चीन आज नेपाल तथा भारत में माओवादियों को हथियार और धन देकर भारत में अस्थिरता फैलाने का प्रयास कर रहा है। आर्थिक मोर्चे पर भारत का शोषण करने के लिए सस्ते और घटिया उत्पादों से भारतीय बाजार को पाट दिया है।

रहा है।

भारत सरकार इन सभी अत्यंत महत्वपूर्ण मुद्दों पर बहुत ही ढीला–ढाला टालमटोल वाला रूख नेहरूजी के समय से ही बनाए हुए है। आज तक इस रूख में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। यहाँ तक कि संसद में पारित वह प्रस्ताव भी ठंडे बस्ते में पड़ा है जिसमें समस्त भारतीय क्षेत्र को मुक्त करवाने का संकल्प किया गया था। भारत जैसे संप्रभुता संपन्न सामर्थ्यशाली राष्ट्र के लिए इस प्रकार की लचर विदेशी नीति उचित नहीं है। भारत सरकार को चाहिये कि दृढ़तापूर्वक चीन को भारतीय क्षेत्र खाली करने के लिए बाध्य करे। चाहे इसके लिए सैन्य अभियान ही करने पड़े। तिब्बत की स्वतंत्रता, दलाईलामा और हजारों तिब्बती शरणार्थियों की सम्मानपूर्वक वापसी के लिए सब प्रकार से दबाव बनाना चाहिये। चीनी उत्पादों से भारतीय बाजार को मुक्त रखने के उपाय अविलम्बन और पूरी सख्ती से करने चाहिये, साथ ही भारत की जनता को भी चाहिये कि वह चीनी उत्पादों को पूर्णतः बहिष्कार कर हमारे ही आर्थिक पोषण से हमारी जड़े काटने के इस षड्यंत्र को नष्ट कर दें। भारत में अत्यंत शक्तिशाली हो चुके माओवाद–नक्सलवाद को सख्ती से कुचल कर भारत को अंदर से कमजोर करने के प्रयास को नष्ट करना अत्यंत आवश्यक है। बांग्लादेश, पाकिस्तान, नेपाल, श्रीलंका आदि देशों की धरती से इन माओवादियों को जो हथियार, धन, प्रशिक्षण और प्रोत्साहन मिल रहा है। उस स्रोत को ही समाप्त कर देने के कूटनीतिक, गुप्तचरीय व आवश्यकता पड़ने पर सैन्य प्रयास करना आवश्यक है।

उपरोक्त सारे विषयों और उनके समाधान भी अनेक देशभक्तों के हृदय में उभरते रहते हैं अब तक की सरकारों में भी कुछ नेताओं, अधिकारियों और सैन्य अधिकारियों के मन में भी उठते रहे होंगे पर किन मजबूरियों, दबाबों–स्वार्थों के चलते नीतियों में परिवर्तन और सख्ती से अमल नहीं होता यह खोज का विषय है। 60 वर्षों के ढुलमुल रवैये के कारण इस ड्रेगन ने विकराल रूप धारण कर भारत को चारों ओर से गिरफ्त में ले लिया है, अभी इसे सख्ती से नहीं निपटा गया तो हमारी स्वतंत्रता खतरे में पड़ सकती है। ❑

:: भारतीय गौविज्ञान परीक्षा ::

अखिल भारतीय स्तर पर स्कूलों के माध्यम से विद्यार्थियों को देशी गौवंश की आर्थिक व वैज्ञानिक दृष्टि से उपयोगिता की जानकारी कराने हेतु 'भारतीय गौविज्ञान परीक्षा आयोजित होगी। परीक्षा संबंधी विस्तृत जानकारी के लिए विवरणिका निःशुल्क उपलब्ध है। इस परीक्षा के लिए प्रांत व जिला स्तर पर परीक्षा संयोजक नियुक्त किये जाने है। श्रेष्ठ, अनुभवी, समर्पित, उर्जावान, सेवाभावी गौभक्त कार्यकर्ता जो इस परीक्षा को आयोजित कराने में सहयोग कर सके वे कृपया संपर्क करें :–

सुरेश कुमार सेन (राष्ट्रीय संयोजक), बी–324, सुभाषनगर, भीलवाड़ा (राजस्थान)–311001, दूरभाष : 094140–13214

चीन की चुनौती

बस कुछ ही कदम की दूरी है, जब भारत सैन्य क्षमता की दृष्टि से चीन के साथ भय का प्रभावी संतुलन स्थापित कर लेगा। ऐसे में उन रक्षा समस्याओं की बर्फ भी पिघलनी प्रारंभ हो जाएगी जो अभी तक अपनी कठोरता का आभास कराती रही हैं। ऐसे में धैर्य के साथ उचित अवसर की प्रतीक्षा में ही राष्ट्रहित निहित है लेकिन स्वदेशी की आँच को तेज करके चीनी उत्पाद के बहिष्कार की मुहिम पर धार तो चढ़ाया ही जा सकता है।

■ डॉ. परशुराम गुप्त

चीन सीमा के पार अपना मजबूत रेल नेटवर्क बना रहा है और उसकी पटरियाँ अरुणाचल प्रदेश की सीमा तक पहुँच गई है। नेपाल की राजधानी काठमाण्डू चीन के साथ विस्तृत सड़क मार्ग से जुड़ा है। यह राजमार्ग काठमांडू को सोनौली बार्डर से जोड़ता है। चीन नेपाल में अपनी पैठ बढ़ाने के लिए ल्हासा से काठमांडो तक सड़क बनाने के लिए एक सौ मिलियन डॉलर व्यय कर रहा है। गुप्तचर सूत्रों के अनुसार चीन नेपाल स्थित नेपाली चाइनीज स्टडीज सेंटर के माध्यम से भारत के विरूद्ध गुप्तचरी कर रहा है।

चीनी इंटरनेशनल इंस्टिट्यूट फॉर स्ट्रैटेजिक स्टडीज की वेबसाइड पर प्रकाशित एक लेख में चीनी रणनीतिकार झान लुई ने चीन सरकार को परामर्श दिया है कि उसे भारत को अनेक भागों में विभाजित करके उसके टुकड़े–टुकड़े कर दिया जाना चाहिए तथा इस काम में उसे पाकिस्तान, नेपाल, भूटान और बांग्लादेश जैसे सहयोगियों की सहायता लेना चाहिए। लेख में भारत को हिन्दू धार्मिक राष्ट्र और जातिवादी समाज मानते हुए प्रगति की राह में बाधक माना गया है। लेखक का कहना है कि तथाकथित महान भारतीय संघ इतिहास में था और इसे थोड़े से प्रयास से तोड़ा जा सकता है। इस हेतु चीन को असमी, कश्मीरी और तमिल आदि लोगों को साथ में लेकर उनके स्वतंत्र राष्ट्र की स्थापना के लिए तथा उल्फा को असम की स्वतंत्रता हेतु सहायता करना चाहिए।

एक अन्य समाचार के अनुसार चीन सीमा के पार अपना मजबूत रेल नेटवर्क बना रहा है और उसकी पटरियाँ अरुणाचल प्रदेश की सीमा तक पहुँच गई है। नेपाल की राजधानी काठमाण्डू चीन के साथ विस्तृत सड़क मार्ग से जुड़ा है। यह राजमार्ग काठमांडू को सोनौली बार्डर से जोड़ता है। चीन नेपाल में अपनी पैठ बढ़ाने के लिए ल्हासा से काठमांडो तक सड़क बनाने के लिए एक सौ मिलियन डॉलर व्यय कर रहा है। गुप्तचर सूत्रों के अनुसार चीन नेपाल स्थित नेपाली चाइनीज स्टडीज सेंटर के माध्यम से भारत के विरूद्ध गुप्तचरी कर रहा है। इसकार्य हेतु चीन नेपाल की आर्थिक सहायता भी कर रहा है। हाल में नेपाल के झापा जिले में ऐसा ही सेंटर खोला गया है। यह सेंटर भी

भारतीय सीमा के पास है। अनुमान है कि चीन ने अब तक ऐसे लगभग 24 सेंटर खोले हैं। इन केन्द्रों में आतंकवादियों के प्रशिक्षण, गुप्तचर सूचनाओं के आदान–प्रदान तथा गुप्तचर नेटवर्क तैयार करने की भी सूचना है। चीन नेपाली माओवादियों को भी भारत के विरूद्ध भड़का रहा है तथा नेपाल के रास्ते आतंकवादियों को बिहार व उत्तर प्रदेश में प्रवेश कराने की योजना बना रहा है। चीन इस काम में पाकिस्तानी आतंकवादी संगठन विशेषकर अलकायदा का समर्थन कर रहा है तथा म्यांमार के रास्ते मिजोरम और असम के करीमगंज के रास्ते पूर्वोत्तर के उग्रवादियों को हथियार भी उपलब्ध करा रहा है।

हाल के वर्षों में चीन के काचीन इंडिपेंडेंस आर्गनाइजेशन से निकट के संबंध बने है जिसका केन्द्र अरुणाचल प्रदेश से लगे म्यांमार के काचीन प्रांत में है। पिछले दिनों मणिपुर की पीपुल्स लिबरेशन आर्मी जैसे अलगाववादी गुटों के सदस्य हथियार और सैन्य प्रशिक्षण लेने के लिए काचीन राज्य के रास्ते ही चीन के यूनान प्रांत गए थे। काचीन राज्य पर म्यांमार का बहुत कम नियंत्रण रह गया है। इस बात के भी प्रमाण है कि जिस समय नई दिल्ली और नगा विद्रोही नेता इसाक मुइवा के बीच नागालैण्ड के मामले में राजनीतिक हल निकालने के लिए शांति वार्ता चल रही थी, उसी समय मुइवा का सहायक इसाक सू और एम.एस.सी.एन. के अन्य प्रतिनिधि चीन गए थे और वहाँ उन्होंने हथियार और समर्थन प्राप्त करने के लिए चीनी अधिकारियों से संपर्क किया था।

अरुणाचल प्रदेश के संदर्भ में चीन का रवैया जग जाहिर है। चीन ने एशियाई

विकास बैंक के बोर्ड में भारत के लिए 2009–12 की राष्ट्र भागीदारी नीति (सीपीएस) का समर्थन इस आधार पर नहीं किया कि इसमें अरुणाचल प्रदेश में बाढ़ और नदी के क्षरण प्रबंधन योजना के लिए तकनीकी सहायता वित्त पोषण शामिल है। (चीन अरुणाचल प्रदेश को अपना भू–भाग मानता है।) चीन को छोड़कर सभी देशों ने इस दस्तावेज का समर्थन किया। चीन ने अरुणाचल प्रदेश में दलाई लामा के प्रवास पर भी आपत्ति की है। वह कश्मीर को भी भारत से अलग दर्शाता है।

चीन नेपाली माओवादियों को भी भारत के विरूद्ध भड़का रहा है तथा नेपाल के रास्ते आतंकवादियों को बिहार व उत्तर प्रदेश में प्रवेश कराने की योजना बना रहा है। चीन इस काम में पाकिस्तानी आतंकवादी संगठन विशेषकर अलकायदा का समर्थन कर रहा है।

1978 में देंगजियाओपेंग के आधुनिकीकरण कार्यक्रम प्रारंभ करने से पहले ही चीन अंतर्महाद्वीपीय बैलास्टिक मिसाइल का परीक्षण कर चुका था। डी. एफ–5 नामक इस मिसाल की मारक क्षमता 12 हजार किलोमीटर है। तिब्बत के उत्तर में स्थित डेलिंगा में वह अंतरराष्ट्रीय मिसाइल बेस बना रहा है। पाकिस्तान के ग्वादर में उसने नए नौसैनिक बंदरगाह का निर्माण किया है। अण्डमान व कोकद्वीप समूह के पास चीनी नौ सेना के उपस्थिति की भी चर्चा है।

उसके पास विश्व का सबसे बड़ा मुद्रा भंडार है और भारत सहित कई देशों के बाजार उसके सस्ते सामानों से पटे पड़े हैं। वह एशिया ही नहीं वरन विश्व की सबसे तीव्रगति से विकास कर रही अर्थव्यवस्था से युक्त है। वैश्वीकरण ने दोनों ही देशों के आर्थिक हित एक दूसरे के साथ जोड़ रखा है।

पाक अधिकृत कश्मीर में पाकिस्तान ने अधिकतर परियोजनाओं का ठेका चीन

को दे रखा है। भारत सरकार ने इसे अपना क्षेत्र मानते हुए इस पर आपत्ति दर्ज की है तथा अरुणाचल प्रदेश पर भी चीन के दावे को नकारते हुए इसे भारत का अभिन्न अंग घोषित किया है। हालांकि चीन बार–बार सीमा का उलंघन करता रहा है।

लेकिन आश्चर्य की बात तो भारतीय विदेश मंत्री की यह घोषणा है कि भारत अरुणाचल प्रदेश जैसे संवेदनशील सीमा क्षेत्रों में विकास परियोजनाओं के लिए कर्ज नहीं लेगा तथा ऐसे क्षेत्रों के लिए धन आंतरिक संसाधनों से जुटाया जाएगा। इस फैसले को चीन की कूटनीतिक जीत के रूप में देखा जा सकता है। हुआहिन (थाईलैंड) में भारतीय प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने चीनी प्रधानमंत्री वेन जियाबाओ के बीच हुई बातचीत में भी दोनों पक्ष विवादित मुद्दों से दूर ही रहें।

ऐसा लगता है चीन और भारत दोनों ही तनाव से बचना चाहते हैं और विकास उनकी पहली प्राथमिकता है। लेकिन विस्तारवादी चीन की प्रवृत्ति घाव को कुरेदतें रहने की है। वह बिना किसी आहट के भारत की सामरिक घेरेबंदी कर रहा है क्योंकि उसे मालूम है कि उसकी प्रभुसत्ता को चुनौती देने की क्षमता एशिया में केवल भारत के पास है। उसे यह भी पता है कि भारत की चुप्पी के पीछे 1962 के खोये सम्मान के पुनर्प्राप्ति की धधकती आग की

प्रसुप्त आंच छुपी है जो उचित समय आने पर अंगार बन सकती है। अमेरिका, जापान, वियतनाम व रूस के साथ कूटनीतिक संबंध व सैन्य अभ्यास चीन के साथ सामयिक संतुलन स्थापित करने में सहायक हो सकता है।

भारत की मारक क्षमता में कई गुना वृद्धि करने वाली बहु–प्रतीक्षित अग्नि–5 मिसाइल का परीक्षण 2011 में शुरूआती महीनों में किया जाना है लेकिन चीन अभी से इस भारतीय ब्रह्मास्त्र से भयाक्रांत है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के मुखपत्र 'पीपुल्सडेली' में 'भारत की नई मिसाइल चीन के हरबिन तक मार करने में सक्षम' शीर्षक से प्रकाशित समाचार में चीन की चिंता की साफ झलक स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। इस मिसाइल की मारक क्षमता 5000 किलोमीटर है लेकिन आसानी से सड़क माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने में सक्षम इस मिसाइल को भारत की उत्तर–पूर्वी क्षेत्र से छोड़े जाने पर चीन के सबसे उत्तरी छोर पर स्थित हारबिन को भी समाप्त किया जा सकता है। चीन का पाक–मोह कब चीन के यूनान प्रांत में फैले जेहादी की भेंट चढ़ जाएगा, कहा नहीं जा सकता।

बस कुछ ही कदम की दूरी है, जब भारत सैन्य क्षमता की दृष्टि से चीन के साथ भय का प्रभावी संतुलन स्थापित कर लेगा। ऐसे में उन रक्षा समस्याओं की बर्फ भी पिघलनी प्रारंभ हो जाएगी जो अभी तक अपनी कठोरता का आभास कराती रही हैं। ऐसे में धैर्य के साथ उचित अवसर की प्रतीक्षा में ही राष्ट्रहित निहित है लेकिन स्वदेशी की आँच को तेज करके चीनी उत्पाद के बहिष्कार की मुहिम पर धार तो चढ़ाया ही जा सकता है। ❑

(लेखक रक्षा अध्ययन विभाग ज.ल.ने.ग्रेजुएट कॉलेज,महराजगंज में कार्यरत हैं।)

1978 में देंगजियाओपेंग के आधुनिकीकरण कार्यक्रम प्रारंभ करने से पहले ही चीन अंतर्महाद्वीपीय बैलास्टिक मिसाइल का परीक्षण कर चुका था। डी.एफ–5 नामक इस मिसाल की मारक क्षमता 12 हजार किलोमीटर है। तिब्बत के उत्तर में स्थित डेलिंगा में वह अंतरराष्ट्रीय मिसाइल बेस बना रहा है। पाकिस्तान के ग्वादर में उसने नए नौसैनिक बंदरगाह का निर्माण किया है। अण्डमान व कोकद्वीप समूह के पास चीनी नौ सेना के उपस्थिति की भी चर्चा है।

मोक्षदायिनी गंगा का वर्तमान अस्तित्व

यह कटु सत्य है कि गंगा का अस्तित्व समाप्त होने के कगार की ओर बढ़ रहा है। क्योंकि पिछले तीन दशकों से जनसंख्या वृद्धि जो कि संसार में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। लगातार शहरीकरण तथा औद्योगिकीकरण ने इस पवित्र धारा पर अनचाहा दवाब पैदा कर दिया है। हिन्दुओं की इस पवित्र मोक्षदायिनी गंगा जो कि आस्था के केन्द्र के रूप में जगजाहिर है तथा शोध के अनुसार प्रदूषण का स्तर खतरे के मापदण्ड से भी अधिक है।

■ भगवती प्रसाद उनियाल

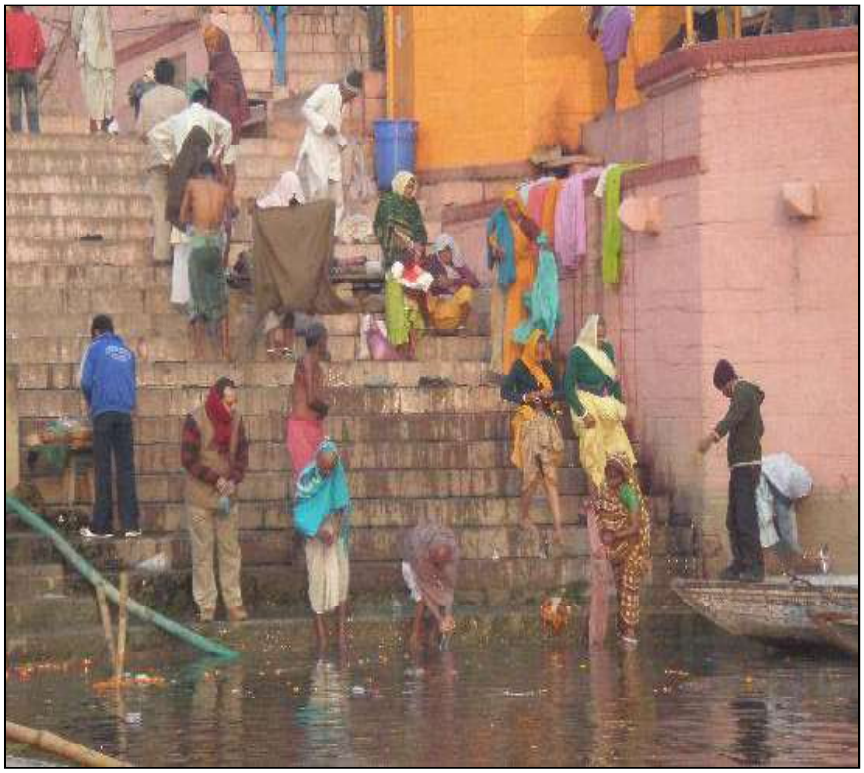

जिस मोक्षदायिनी माँ गंगा के जल को संपूर्ण अमंगलों का हरण का कारक माना जाता है। जिसकी उपमा हिंदू पुराणों, शास्त्रों तथा वेदों में की गई है, जिसके अवतरण के हेतु राजा भागीरथ ने घोर तपस्या करके अपने पूर्वजों के उद्धार एवं जनकल्याण के लिये पृथ्वी पर अवतरित होने हेतु की, विष्णुपादनी, ब्रह्मकमुण्डलीय तथा शिव जटानिवासनी पतित पावनी मोक्षदायिनी गंगा की उपमा एवं महत्व को अनेक शास्त्र तथा महान व्यक्तित्व के धनी महापुरुषों ने की है।

गंगा गीता तथा गाय हिंदुओं की आत्मा है, उसके अंयत्र हिन्दुत्व की कल्पना करना भी बेईमानी होगी।

– स्वामी विवेकानंद

गंगा हिन्दुओं के आस्था का केन्द्र बिन्दु है, गंगा का उद्‌गम स्थल गौमुख से होकर उत्तराखण्ड, उत्तरप्रदेश, झारखण्ड, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल प्रांतों से होकर गुजरती है। इसके किनारे पर करोड़ों लोग बसे हुए हैं और लाखों लोगों को गंगा के महत्व के कारण रोजगार उपलब्ध हो रहा है। गंगा पर जहां हिंदुओं की अपार श्रद्धा है, वही विदेशी नागरिक भी गंगा के प्रभाव से प्रभावित होते हैं। गंगा में प्रतिदिन दो लाख लोग स्नान करते हैं तथा अपने पितृ कार्यो को संपादित करते हैं।

मान्यता है कि गंगा में स्नान तथा मृत्योपरांत परालौकिक कार्य संपादन से मोक्ष की प्राप्ति होती है, क्योंकि मोक्षदायिनी गंगा वैदिक, दौहिक तथा भौतिक कष्टों का निवारण करने वाली है। गंगा की सहायक नदियां – यमुना, रामगंगा, चंबल, टोसा, कर्मनासा, गोमती, बागर, गंड़क, बूढ़ी गंडक, कोसी, महानन्दा, भिलंगना, अलकनन्दा, मंदाकनी, बाल गंगा इत्यादि का जल समाहित होता है तथा उक्त नदियों का जल गंगा जल के सदृश्य हो जाता है। ऐसी महान नदी की विलक्षण प्रतिभा जग विदित है। यह हमारी प्राचीन सांस्कृतिक इतिहास से भी जुड़ी हुई है। इसका अनुमान इसके किनारे बसे प्रमुख नगरों, हरिद्वार, प्रयाग, काशी, उज्जैन तथा पाटलीपुत्र की धार्मिक स्थिति के अवलोकनोपरांत ही किया जा सकता है। इसके जल को सैकड़ों गांव एवं नगर पीने के पानी तथा सिंचाई हेतु उपयोग करते हैं। यह विज्ञान सम्मत था कि इसका जल कई वर्षो तक खराब नहीं होता?

लेकिन क्या? आज भी गंगा अपने पूर्व स्वरूप में है। यह सर्वविदित है कि नदियां छोटी हो अथवा बड़ी वह किसी न किसी गांव अथवा नगर से गुजरती हैं। नदियां अपने साथ बहुत सारे घुलनशील खनिज पदार्थों, जैविक मिश्रण, रेत के छोटे–छोटे अंश, रेत, बजरी और कई

प्रकार के पदार्थों को बहाकर लाती हैं। नदियां प्रथम छोटे–छोटे नालों के रूप में बहती हैं और आगे चलकर उसका आकार विस्तृत हो जाता है, क्योंकि उसमें अन्य नदियों एवं नाले मिल जाते हैं। तदोपरान्त वह समुद्र में समा जाती हैं, लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि यह सभी की सभी बुरी तरह से प्रदूषित हो चुकी हैं। जिसमें प्रमुख स्थान गंगा का भी है। क्योंकि गंगा के किनारे सबसे अधिक लोग बसे हुए हैं। यह अकाट्य सत्य है कि वातावरण का प्रदूषण औद्योगिक क्रांति का एक उपहार स्वरूप है। इससे पहले कृषि रूपी संस्कृति एवं महत्वपूर्ण गिरावट गंगा में ला चुकी है। मिट्टी के कटाव के रूप में, पेडों के कटान से, हजारों लीटर औद्योगिक कचरा, गंदे नालों का बहाव इत्यादि गंगा को स्वयं एक गंदे नाले के रूप में परिवर्तित कर रहे हैं। पानी की शुद्धता संबंधी बहुत गंभीर समस्या है। प्रदूषित पानी से बिमारियां अनियंत्रित हो रही हैं। विशेषकर चर्म रोग, समुद्री जंतुओं की दुर्लभ से दुर्लभ प्रजातियां भी प्रदूषण के भीषण आक्रमण की चपेट में लुप्त प्रायः हो गई हैं।

एक सर्वेक्षण के अनुसार विश्व में पांच नदियां जोकि करोड़ों लोगों का जीवन पालती हैं। डैमीकरण, जल दोहन तथा जलवायु परिवर्तन के कारण सबसे अधिक खतरे में है। जिनमें गंगा भी एक है। गंगा विश्व की महानतम नदी धीरे–धीरे अपनी रोमांचकता खो रही है। यह कटु सत्य है कि गंगा का अस्तित्व समाप्त होने के कगार की ओर बढ़ रहा है। क्योंकि पिछले तीन दशकों से जनसंख्या वृद्धि जोकि संसार में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। लगातार शहरीकरण तथा औद्योगिकीकरण ने इस पवित्र धारा पर

अनचाहा दवाब पैदा कर दिया है। हिन्दुओं की इस पवित्र मोक्षदायिनी गंगा जो कि आस्था के केन्द्र के रूप में जगजाहिर है तथा शोध के अनुसार प्रदूषण का स्तर खतरे के मापदण्ड से भी अधिक है। स्थिति की जटिलता यह है कि गंगा का जल न केवल पीने तथा नहाने के लिए प्रदूषित है अपितु कृषि हेतु भी अनुपयोगी हो गया है। एक शोध के अनुसार कोलिफोरम का स्तर पीने के पानी में 50 से कम, नहाने के लिए 500 से भी कम तथा कृषि कार्य हेतु प्रयुक्त पानी 5000 से कम होना चाहिए लेकिन हरिद्वार में गंगा के पानी का स्तर 5500 तक पहुंच गया है।

इसी प्रकार 890 लाख लीटर सीवरेज का मलवा गढ़वाल के 12 कस्बों गौमुख से हरिद्वार तक गंगा में समाहित होता है। चारधाम यात्रा के समय मई से अक्टूबर तक 20 लाख से भी अधिक यात्री यात्रा करते हैं तो मलवे की मात्रा और भी बढ़ जाती है तथा इसके अलावा अधजले मनुष्यों के शव तथा श्रीनगर, टिहरी, ऋषिकेश तथा हरिद्वार में अस्पतालों का घातक मलवा भी गंगा को अधिकतक प्रदूषित कर रहा है।

यमुना नदी जो कि गंगा की मुख्य सहायक नदी है। लगभग एक दशक से भी अधिक समय से जलीय जीवन से वंचित है। भारत का सबसे पवित्र नगर वाराणसी माना जाता है। जहां पर आज कैलिफोम जीवाणु की मात्रा सुरक्षा से अधिक है। यह लम्बे आकार का जीवाणु है जो मनुष्य तथा पशुओं की आंतों में घातक बिमारी फैलाता है। यह भोजन तथा पानी में घातक प्रदूषण की तरह कार्य करता है। गंगा नदी में पारे की मात्रा भी अधिक पाई जाती है, क्योंकि जैव तथा अजैव संसाधनों में भी पारे की मात्रा पाई जाती है। श्रद्धालु लोग जिस–जिस स्थान में स्नान करते हैं वहां नदी के पानी में पारे की सतह पर जलीय जीव, मछलियों, मिट्टी तथा वनस्पति में क्रमशः 28%, 47%, 75%, 96%, 42% तथा 89% पायी गई है। यद्यपि पारे की मात्रा खतरे के मानक से ऊपर नहीं बढ़ी है तथापि इसकी उपस्थिति चिंताजनक विषय है।

एक अध्ययन के अनुसार जब पवित्र पतित पावन गंगा वाराणसी नगर में प्रवेश करती है तो 100 मिली लीटर जल में 60,000 मल जीवाणु होते है जो कि नहाने के लिए उपयुक्त जल से 120 गुणा अधिक है। पांच कि.मी. के अंतराल में 24 सीवरेज तथा 60 हजार श्रद्धालु प्रतिदिन स्नान करते हैं जिसकी वजह से गंगा का पानी काला तथा प्रदूषित हो जाता है। साथ ही अधजले मानव अवशेषों तथा बच्चों की लाशों को भी प्रवाहित किया जाता है।

उत्तर भारत का चमड़ा उद्योग भी गंगा में प्रदूषण के लिए एक सबसे बड़ा कारक है। वह अपने बेकार मलवे को अनेक तरीकों से नदी में उत्सर्जित करता है, जिसमें मुख्यतः कार्बनिक दिव्य पदार्थ और अन्य लवणीय पदार्थ गंगा नदी में विसर्जित किया जाता है। जो कि लगभग 30 से 35 प्रतिशत तक होता है, चमड़े के समस्त अवशेष को गंगा में प्रवाहित किया जाता है। चमड़ा उद्योग एक सीमित क्षेत्र तक फैला होता है जैसा कि कानपुर इत्यादि, परिणामतः चमड़ा उद्योग का पर्यावरण पर दुष्प्रभावों के कारण यह एक खतरनाक उद्योग घोषित किया गया है। अधिकांश लोग भारी धातुओं के अवशेषों को गंगा नदी और उसकी सहायक नदियों में विसर्जित करते है। ऋषिकेश से वाराणसी तथा कनौज तक गंगा नदी सबसे अधिक प्रदूषित है।

उपरोक्त समस्त वस्तु स्थिति का उत्तरदायित्व केवल जनमानस पर ही नहीं डाला जा सकता है। अपितु सरकार भी उसके हेतु पूर्णरूपेणु दोषी है, क्योंकि पर्यावरण नियमों का परिपालन सरकार का उत्तरदायित्व है। जिसके कारण आज गंगा जस की तस मैली की मैली है तथा प्रदूषणयुक्त बनी हुई है। विगत 22 वर्षों

में गंगा सफाई अभियान पर 900 करोड़ से भी अधिक धन व्यय किया गया है लेकिन उसका परिणाम शून्य रहा है। अब केन्द्र सरकार अपनी कुंभकर्णीय निद्रा से जागृत हो रही है। स्वयं केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने स्वीकार किया है कि विगत 22 वर्षों में गंगा सफाई अभियान – गंगा एक्शन प्लान–1 तथा गंगा एक्शन प्लान–2 का कार्य संतोषप्रद नहीं रहा है। इसलिए इसको भंग करके एन.जी.वी. आर.वी.ए. की स्थापना की गयी है। गंगा में प्रतिदिन उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल से लगभग 59 से भी अधिक गन्दे नालों तथा औद्योगिक कचरा गंगा में समाहित होता है।

एक अध्ययन के अनुसार जब पवित्र पतित पावन गंगा वाराणसी नगर में प्रवेश करती है तो 100 मिली लीटर जल में 60,000 मल जीवाणु होते है जो कि नहाने के लिए उपयुक्त जल से 120 गुणा अधिक है। पांच कि.मी. के अंतराल में 24 सीवरेज तथा 60 हजार श्रद्धालु प्रतिदिन स्नान करते हैं जिसकी वजह से गंगा का पानी काला तथा प्रदूषित हो जाता है।

इस समस्या से मुक्ति पाने हेतु अगले 10 वर्षों में 15000 करोड़ रुपए व्यय किए जाएंगे। सन् 2020 तक गंगा को प्रदूषण मुक्त करने की महत्वाकांक्षी योजना को पूरा करने हेतु विश्व बैंक बड़े पैमाने पर सहायता कर रहा है। पहले चरण में एक अरब डॉलर की सहायता मिलने वाली है, इसके अलावा परियोजना की तैयारी के लिए 30 लाख डॉलर का प्रस्ताव विश्व बैंक के समक्ष रखा गया है। आशा है इन महत्वाकांक्षी योजना से गंगा प्रदूषण मुक्त हो जाए। लेकिन इन परियोजनाओं से भी महत्वपूर्ण है हर व्यक्ति संकल्प लें कि वे गंगा माँ को प्रदूषित करने वाले तत्वों को गंगा में विसृजित नहीं करेंगे साथ ही औद्योगिक कचरे, गंदे नाले का पानी गंगा व गंगा की सहायक नदियों में नहीं छोड़ेगे तभी माँ गंगा अपने स्वच्छ जल से समस्त भारतीयों की जीवनदायिनी बन सकेगी। ❑

वन पशुओं की सुरक्षा भी जरूरी

सभी देश अपने–अपने देश में जानवरों की खाल को बेचना तथा मारने पर पूर्णतया प्रतिबंध और कड़े नियम लागू नहीं करेंगे तब तक इन वन पशुओं का अस्तित्व हमेशा खतरे में ही रहेगा। वर्तमान समय में चीन में खुलेआम बाजारों में शेर की खाल का बिकना, भारत, नेपाल, बर्मा, श्रीलंका के बाजारों में भी चोरी–छिपे जानवरों से निर्मित सामानों का बिकना। इन सभी देशों को अपने यहां कड़े नियम लागू करने होंगे तभी हम और हमारे वन पशु भी सुरक्षित रहे सकते हैं।

■ उमेश प्रसाद सिंह

अपने देश में वन पशुओं की सुरक्षा बहुत बड़ी चुनौती है। यहाँ रक्षक ही भक्षक बन गए हैं। पेशेवर शिकारी तो अवैध रूप से जंगली पशुओं की हत्या करते रहते हैं। वन क्षेत्र के आसपास रहने वाले ग्रामीण मौका पाकर मूल्यावान पशुओं को मारने से नहीं चूकते।

इसी वर्ष एक जनवरी की एक घटना है। असम में तेज रफ्तार वाली मालगाड़ी ने हाथी के दो बच्चों सहित छह हाथियों को रौंद दिया। यह दुर्घटना गुवाहाटी से 270 किलोमीटर दूर कार्वी जिले के वालिंग रेलवे स्टेशन के पास हुई। इसकी सूचना जंगल की आग की तरह आसपास के गांवों में फैल गई। स्थानीय लोग झुंड बनाकर घटना स्थल पर पहुंच गए। वे अपने साथ हथियार भी लाए थे। वे मृत हाथियों के नाखून, दांत, हड्डियां आदि निकाल कर भाग गए।

यह पहली घटना नहीं है। स्थानीय लोग बेरहमी से जंगली जीवों की हत्या करते हैं। वे जानवरों के संभावित मार्ग पर गड्डा खोद देते हैं। उस पर घास फूस डाल देते हैं। जंगली जानवर, हाथी, शेर, बाघ, भालू, अजगर, जंगली भैसा, हिरण आदि धोखे से उसमें गिर जाते हैं। तब स्थानीय लोग उन्हें लाठियों से पीट–पीट कर मार डालते हैं। जानवरों के शरीर के अवयवों को विदेशों दलालों को बेचना और अंध विश्वास के चलते यह सब होता है।

आज गांवों में अगर किसी ग्रामीण की बकरी या गाय–भैस किसी वन प्राणी का आहार बन जाती है तब ग्रामीण इसका प्रतिशोध में ज्यादातर बाघों की निर्ममतापूर्वक हत्या कर देते है। ग्रामीणों के अनुसार यह कोई नहीं बात नहीं है यह सब होता रहता है। ताज्जुब है ग्रामीण लोग भी वनों की सुरक्षा में योगदान नहीं देते है।

आज वनों के आसपास के लोगों को वन या वन–प्राणियों से कोई ममता नहीं है। वे बेशकीमती लकड़ियों को काटते हैं और जंगल के भीतर तक अपने खेतों का फैलाव करते हैं।

आज गांवों में अगर किसी ग्रामीण की बकरी या गाय–भैस किसी वन प्राणी का आहार बन जाती है तब ग्रामीण इसका प्रतिशोध में ज्यादातर बाघों की निर्ममतापूर्वक हत्या कर देते है। ग्रामीणों के अनुसार यह कोई नहीं बात नहीं है यह सब होता रहता है। ताज्जुब है ग्रामीण लोग भी वनों की सुरक्षा में योगदान नहीं देते है।

आज हजारों बाघ प्रतिशोध की भावना से, खाल, हड्डियां और दवाई के नाम, अपनी वीरता का प्रदर्शन आदि के नाम पर मारे जा रहे है। यही कारण है 1901 में भारत में बाघों की कुल संख्या एक लाख सत्रह हजार थी। परंतु आज

उनकी संख्या मात्रा चौदह सौ रह गयी है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि बाघों का उत्पीड़न जारी रहा तो कुछ ही वर्षों में उनका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा।

आए दिन अवैध शिकार, रेल से कटकर या बिजली करंट लगने और आपसी युद्ध में बड़ी संख्या में वन पशु मारे जा रहे हैं। भारत में बाघ और हाथी के बाद सर्वाधिक हत्या गैंड़ों की होती है। हाल ही में विश्व प्रसिद्ध काजीरंगा पार्क (असम) में एक सींग वाले छह गैड़ों की हत्या की गई थी। विगत वर्षों में इस क्षेत्र में 20 गैड़ों की हत्या से परेशान असम के वन विभाग ने इनकी सुरक्षा के लिए सीमा सुरक्षा बल के जवानों की मदद लेने का फैसला किया है। असम ट्रिब्यून के अनुसार वन विभाग के तमाम प्रयासों के बावजूद गैड़ों की हत्या का सिलसिला थम नहीं रहा है। शिकारियों का संगठित गिरोह गैड़ों को मारकर उनका सींग ले जाता है। जब भी यहां किसी गैंड़े की हत्या हाती है वनमंत्री नई व्यवस्था करने का वादा करते हैं लेकिन परिणाम शून्य होता है। आशंका है कि यहां के गैड़ों की हत्या में एक बड़ा अंतरराष्ट्रीय गिरोह कार्य कर रहा है साथ ही उसका स्थानीय लोगों का समर्थन भी प्राप्त है।

भारत के अतिरिक्त आस्ट्रेलिया के कंगारूओं पर मुसीबतों के पहाड़ आ गए हैं। हालांकि कंगारूओं की रक्षा के लिए यूरोपीय आर्थिक समिति ने कंगारूओं से उत्पादित वस्तुओं पर रोक लगा दी है लेकिन इसका कुछ लाभ दिखाई नहीं दे रहा है। विश्व के पशु प्रेमियों ने भी कंगारूओं की हत्या का विरोध किया है।

आज आस्ट्रेलिया में कंगारूओं की हत्या और उसकी खाल का निर्यात किया जा रहा है। आस्ट्रलिया सरकार के कड़े

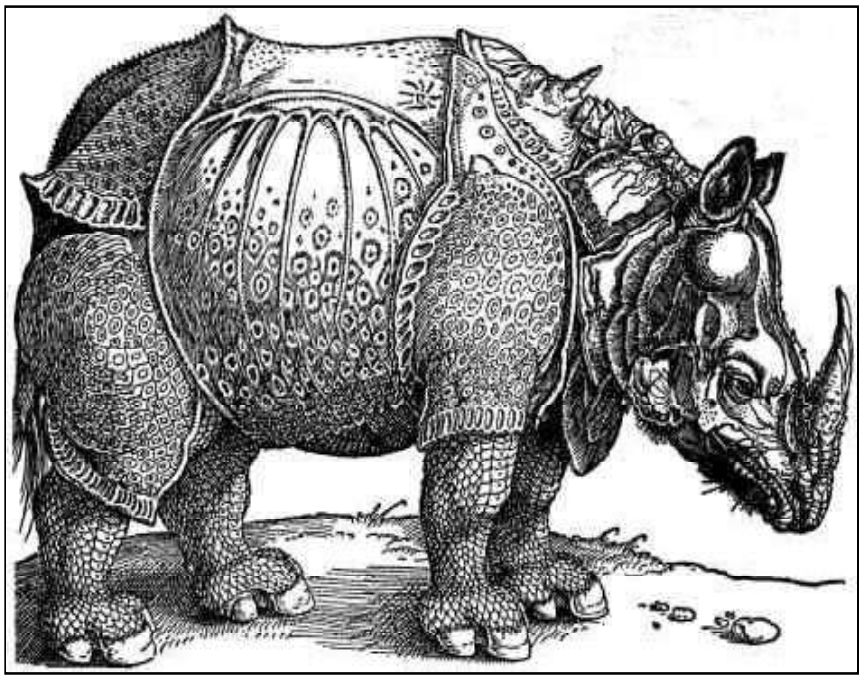

नियामों के बावजूद भी कंगारूओं की हत्या हो रही है। कारण है शिकारी को कंगारू की खाल का अंतरराष्ट्रीय बाजार में काफी दाम मिलना।

इसके अलावा शुतुरमुर्ग उन प्राचीन जीवों में से है जो पांच छह करोड़ वर्ष पूर्व भी धरती पर विचरण करते थे। यह प्राणी पशु और पक्षी के बीच का है। यह तेजी से दौड़ सकता है, ऊंची छलांग लगा सकता है परन्तु उड़ नहीं सकता। इसका वजन 135 किलो तक होता है। इसकी ऊंचाई लगभग 8 फुट तक होती है। इस पक्षी का भारत में सफाया हो चुका है। वर्तमान समय में यह पक्षी सिर्फ मध्य अफ्रीका में पाया जाता है। हालांकि इसे संरक्षित पशु का दर्जा दे दिया गया है परंतु अवैध तरीके से इस निर्जीव पक्षी की हत्या की जाती है। कारण अंतरराष्ट्रीय बाजारों में इसकी काफी मांग है।

असम ट्रिब्यून के अनुसार वन विभाग के तमाम प्रयासों के बावजूद गैड़ों की हत्या का सिलसिला थम नहीं रहा है। शिकारियों का संगठित गिरोह गैड़ों को मारकर उनका सींग ले जाता है। जब भी यहां किसी गैंड़े की हत्या हाती है वनमंत्री नई व्यवस्था करने का वादा करते हैं लेकिन परिणाम शून्य होता है।

देखा जाए जब तक सभी देश अपने–अपने देश में जानवरों की खाल को बेचना तथा मारने पर पूर्णतया प्रतिबंध और कड़े नियम लागू नहीं करेंगे तब तक इन वन पशुओं का अस्तित्व हमेशा खतरे में ही रहेगा। वर्तमान समय में चीन में खुलेआम बाजारों में शेर की खाल का बिकना, भारत, नेपाल, बर्मा, श्रीलंका के बाजारों में भी चोरी–छिपे जानवरों से निर्मित सामानों का बिकना। इन सभी देशों को अपने यहां कड़े नियम लागू करने होंगे तभी हम और हमारे वन पशु भी सुरक्षित रहे सकते हैं। ❑

साक्षात्कार

शब्दों की चौकीदारी संभव नहीं : अनुपम मिश्र

अनुपम मिश्र पानी और पर्यावरण पर काम करने के लिए जाने जाते हैं लेकिन उनकी सर्वाधिक चर्चित पुस्तक ''आज भी खरे हैं तालाब'' के साथ उन्होंने एक ऐसा प्रयोग किया जिसका दूरगामी दृष्टि दिखती है। उन्होंने अपनी किताब पर किसी तरह का कापीराईट नहीं रखा। इस किताब की अब तक एक लाख से अधिक प्रतियां प्रकाशित हो चुकी हैं। मीडिया वर्तमान स्वरूप और कापीराईट के सवाल पर संजय तिवारी* ने उनसे विस्तृत बात की। यहां प्रस्तुत है बातचीत के प्रमुख अंश।

सवाल – कापीराईट को लेकर आपका नजरिया यह क्यों है कि हमें अपने ही लिखे पर अपना दावा (कापीराईट) नहीं करना चाहिए?

जवाब – कापीराईट क्या है इसके बारे में मैं बहुत जानता नहीं हूँ। लेकिन मेरे मन में जो सवाल आये और उन सवालों के जवाब में मैंने जो जवाब तलाशे उसमें मैंने पाया कि आपका लिखा सिर्फ आपका नहीं है। आप एक जीवन में समाज के किस हिस्से कब और कितना सीखते, ग्रहण करते हैं इसकी कोई लाईन खींचना कठिन काम है। पहला सवाल तो यही है कि मेरे दिमाग में जो है वह क्या केवल मेरा ही है? अगर आप यह मानते हैं कि आपका लिखा सिर्फ आपका है तो फिर आपको बहुत कुछ नकारना होगा। अपने आपको एक ऐसी इकाई साबित करना होगा जिसका किसी से कोई व्यवहार नहीं है। न कुल परिवार से, न समाज से। क्योंकि हम कुल, परिवार, समाज में बड़े होते हुए ही बहुत कुछ सीखते हैं और उसी से हमारी समझ बनती है। अगर आप कापीराईट का इतिहास देखें तो पायेंगे कि हमारे समाज में कभी कापीराईट की कोई प्रवृत्ति नहीं थी। अपने यहां कठिन श्रम से प्राप्त की गयी सिद्धि को भी सिर्फ सेवा के निमित्त उपयोग की जाती है। मीरा, तुलसी, सूरदास नानक ने जो कुछ बोला, लिखा वह सब हाथ से कापियां लिखी गयीं। तमिलनाडु में ऐसे हजारों ग्रंथ हैं जो हाथ से लिखे गये और हाथ से लिखे ग्रंथ भी दो–ढाई हजार साल अनवत शुद्धत्तम स्वरूप में जिंदा रहे हैं। इसलिए यह कहना कि कापीराईट से मूल सामग्री से छेड़छाड़ होनी बच जाती है ऐसा नहीं है। जिनका जिक्र मैं कर रहा हूँ वे सब बिना कापीराईट के भी शुद्धतम स्वरूप में लंबे समय तक बची रही हैं और आज भी विद्यमान हैं। उनको तो किसी कापीराईट एक्ट की जरूरत महसूस नहीं हुई फिर आपको क्यों होती है?

कॉपीराईट का नियम अंग्रेजों के साथ भारत में आया लेकिन दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि किसी के मन में कभी यह सवाल और संदेह नहीं उठा कि आखिर हम कापीराईट का इस्तेमाल क्यों करें? महात्मा गांधी तक ने अपनी कापीराईट एक ट्रस्ट नवजीवन ट्रस्ट को पचास साल के लिए दे दिया था। अब पचास साल बाद गांधी के लिखे पर फिर कापीराईट हट गया है। तो फिर महज पचास साल के लिए इसका पालन करने से गांधी विचार भी नहीं बच सका। यह सब देखकर आश्चर्य होता ही है।

सवाल – लेकिन आज के इस व्यावसायिक युग में किसी का लिखा उसका व्यवसाय भी हो सकता है जिससे उसके जिंदगी की गाड़ी चलती है। वो भला अपना लिखा समाज को अर्पित कर दे तो अपना गुजारा कैसे करेगा?

जवाब – जिस दिन हम केवल कमाने के लिए लिखने लगेंगे उस दिन हमारे लिखने की गुणवत्ता भी गिर जाएगी। लिखना केवल पैसे के लिए नहीं होना चाहिए। कुछ लोग पैसे के लिए काम करते हैं तो भी उनको ध्यान रखना चाहिए कि वे जो लिखना चाहते हैं वह लिखें न कि पैसे देकर उनसे कोई कुछ लिखवाता है तो केवल वही न करते रहें। समाज ऋण भी कुछ होता है जिसको चुकाने की नैतिक जिम्मेदारी महसूस होनी चाहिए। अगर आप सिर्फ पैसे के लिए लिखेंगे तो कभी वह नहीं लिख पायेंगे जो आप लिखना चाहते थे। आप बाजार में अपना लिखा एक तराजू पर लेकर खड़े हो जाएं और अशर्फियों में बोली लगाना शुरू करेंगे तो मुश्किल होगी। फिर जो अशर्फी देगा वह आपके लिखे को ले जाएगा। असल में कापीराईट का व्यवसाय यह अशर्फी देने वाला समाज पैदा करता है। क्योंकि उसको आपके लिखे से मुनाफा कमाना है। इसलिए लिखने वालों को यह जरूर सोचना चाहिए कि आखिर वे किसके लिए लिख रहे हैं? एक बात जान लीजिए, अशर्फी लेकर लिखने वाले लोग अस्तित्व में लंबे समय तक उपलब्ध नहीं रह पाते हैं। एक समय के प्रवाह में आते हैं और

क्या अनाज अपने ऊपर कापीराईट रखता है कि एक दाना बोएंगे तो सिर्फ एक दाना ही वापस मिलेगा? पेड़–पौधे अपने ऊपर कापीराईट रखते हैं? तो फिर विचार पर कापीराईट क्यों होना चाहिए?

अशर्फी में तुलकर समाप्त हो जाते हैं। मुंबई फिल्म उद्योग में कम पैसा है? लेकिन जरा देखिए, कल के स्टार आज किस गर्त में पड़े हैं? यही आज के स्टारों के साथ कल होगा। यही बात लेखकों पर भी लागू होती है। अच्छे लिखने वालों की कीमत बाजार में नहीं समाज में निर्धारित होनी चाहिए।

जहां तक आजीविका चलाने की बात है तो इसमें व्यावहारिक दिक्कत कम और मानसिक संकट ज्यादा है। अगर हम बुद्धि के श्रम के साथ थोड़ा शरीर का श्रम भी जोड़ दें तो दिक्कत नहीं होगी। आखिर क्यों हम केवल बुद्धि के श्रम की कमाई ही खाना चाहते हैं? यह तो विकार है। सड़क पर कूदने से अच्छा है कि थोड़ी देर खेत में कूद लो। थोड़ा श्रम करके पूंजी अर्जित कर लो। केवल अपने लिखे का मत खाओ। तब शायद ज्यादा अच्छा लिख सकोगे। ऐसा जीवन मत जियो जो केवल लिखने पर टिका हो।

सवाल – टेक्नॉलाजी के इस युग में कापीराईट कितना प्रासंगिक रह गया है?

जवाब – टेक्नालाजी और कापीराईट दो विरोधाभासी तत्व हैं। जब टेपरिकार्डर आया तो वह सूटकेस के आकार में था। आप किसी जगह भाषण देते थे तो वह रिकार्ड होना शुरू हो गया। इसके बाद टेपरिकार्डर का आकार छोटा होता गया और आज हम मोबाइल में ही सब कुछ रिकार्ड कर सकते हैं। अब सोचिए किसी के भाषण पर कापीराईट का अब क्या मतलब? मेरे बोले को कौन कैसे रिकार्ड करके कहां पहुंचा देगा, मैं भला कैसे जान पाऊंगा? जैसे टेपरिकार्डर ने एक तरह के कापीराईट को खत्म किया उसी तरह फोटोकापी मशीन ने लिखे के कापीराईट को अप्रासंगिक बना दिया। अब कम्प्यूटर ने तो सारी हदें तोड़ दी हैं। पहले तो हाथ से मजदूरी करके कापी करना होता था लेकिन टेक्नालाजी ने शेयरिंग का सब काम आसान कर दिया है। फिर क्यों झंझट मोल लेते हो? संभवतः टेक्नालाजी हमें बता रही है कि देखो राजा! शब्दों की चौकीदारी संभव नहीं। इसलिए इसका आग्रह छोड़ दो। जो संभव नहीं, उसका आग्रह रखने की क्या जरूरत है?

सवाल – आपने कहा कि केवल अपने लिखे का मत खाओ। क्या इसको आप थोड़ा और स्पष्ट करेंगे?

जवाब – ऐसा कहने का मेरा आशय है कि इतना अच्छा लिखो कि तुम्हारे लिखे का कोई और भी खाये। मैं ऐसा नहीं कह रहा कि आपके लिखे का सिर्फ प्रकाशक खाये। कुछ ऐसा लिखिए कि समाज के लोगों को कुछ फायदा हो। उनका जीवन सुधरे, उनका पानी रुके, उनका अकाल दूर हो, बाढ़ में चार गांव तैर जाएं, कुछ ऐसा लिख दो कि संकट में लोगों के लिए वह संबल की तरह काम आये। हो सकता है कि इसके लिए पैसा न मिले लेकिन बदले में और भी बहुत कुछ मिलेगा जो पैसे से ज्यादा कीमती होगा। लिखने वाली जमात को यह समझना होगा।

सवाल : आपने अपने लिखे पर कभी कापीराईट नहीं रखा। क्या आपको जीवन में आर्थिक संकट नहीं उठाना पड़ा?

जवाब – प्राप्ति सिर्फ पैसे की ही नहीं होती है। मुझे पैसा नहीं मिला लेकिन बदले में समाज का इतना प्यार मिला है जिसके सामने पैसे का कोई मोल नहीं है। मैं एक सामाजिक संस्था (गांधी शांति प्रतिष्ठान) में काम करता हूँ और कल्पना से भी बहुत कम मानदेय प्राप्त करता हूँ। लेकिन मुझे जीवन में न कोई शिकायत है और न ही कोई संकट। मैंने पैंतीस साल पहले ही तय कर लिया था कि मुझे अपने लिखे पर कोई कापीराईट नहीं रखना है और आज तक नहीं रखा और न आगे कभी होगा। कुछ अप्रिय प्रसंग जरूर आये लेकिन व्यापकतौर पर तो समाज का फायदा ही हुआ और बदले में मुझे उनका अथाह प्यार और सहयोग मिला। आप देखिए दुनिया में तो अब एक नया फैशन ही चल पड़ा है कापी लेफ्ट का। खुले समाज की नयी परिभाषाएं बन रही हैं तो फिर हम अपनी ओर से उस खुले समाज के गुल्लक में एक सिक्का क्यों नहीं डालते? अच्छी चीज को रोककर आखिर हम क्या करेंगे? अगर हम सब बातों में खुलापन चाहते हैं तो अपने ही लिखे पर प्रतिबंध क्यों लगाएं? वैसे भी अब टेक्नालाजी इसकी इजाजत नहीं देती है।

सवाल : क्या अधिकार का दावा छोड़ना ही एकमात्र रास्ता है?

जवाब – जी बिल्कुल। यही प्राकृतिक व्यवस्था है। क्या अनाज अपने ऊपर कापीराईट रखता है कि एक दाना बोएंगे तो सिर्फ एक दाना ही वापस मिलेगा? पेड़–पौधे अपने ऊपर कापीराईट रखते हैं? पानी अपने ऊपर कापीराईट रखता है? तो फिर विचार पर कापीराईट क्यों होना चाहिए? प्रकृति हमको सिखाती है कि चीजें फैलाने के लिए बनायी गयी हैं।

सवाल : कापीराईट और लाभ की मानसिकता ने क्या चौथे खंभे पत्रकारिता के सामने भी संकट पैदा किया है?

जवाब – पहले तो इसे चौथा खंभा क्यों कहते हो? हमने एक काल्पनिक महल खड़ा कर लिया जिसके चार खंभे बना लिये हैं। मुझे तो चारो खंभों के बारे में शक है। ऐसे खंभे पर टिकाते जाएं तो फिर बारहखंभा में क्या दुर्गुण है? सड़क पर एक हवेली थी उसमें बारह खंभे थे इसलिए उसका नाम बारहखंभा हो गया। ये लोकतंत्र के सभी खंभे बालू की भीत में लगे हवा के खंभे हैं। चौथा खंभा भी खंभा नहीं बल्कि खोमचा है। आप देखिए अब खबरें बिक रही हैं तो आप इसे खंभा कहेंगे या फिर खोमचा? इस खोमचे में काम करने वाले पत्रकार भी इस पतन के लिए उतने ही जिम्मेदार हैं जितने खोमचे के मालिक। आज पत्रकार अपनी जिम्मेदारी से बच नहीं सकते।

*संजय तिवारी हिन्दी वेब पोर्टल 'विस्फोट' के संपादक हैं।

आम आदमी को निराशा व खास आदमी को थोड़ी आशा

कैसी अजीब बात है कि देश के जिम्मेदार केन्द्र सरकार के मंत्री नित्य प्रति ऐसे–ऐसे बयान देने से तनिक भी चूक नहीं रहे हैं जिनसे देश में महंगाई को गति मिलती रहे। इन बयानों का सबसे बड़ा लाभ जमाखोर उठा रहे हैं तथा आम आदमी की हालत महंगाई ने खराब करके रख दी है व सत्ता के गलियारों में रहने वाले लोग व पूंजीपति लोग मालामाल हो गये है।

■ डॉ. सूर्य प्रकाश अग्रवाल

देश की अर्थव्यवस्था को कम व राजनीतिक उठापटक को अधिक ध्यान में रखते हुए देश के केन्द्रीय वित्तमंत्री प्रणव मुखर्जी ने हमारे विश्व प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की सलाह पर 26 फरवरी 2010 को लोकसभा के पटल पर अपना बजट 2010 पेश कर अपने वित्तमंत्री होने का कर्तव्य पूर्ण कर दिया। कुल मिला कर बजट 2010 से आम आदमी को निराशा ही हाथ लगी है जबकि खास आदमी को थोड़ी बहुत आशा की किरण बजट ने दिखा दी है। कांग्रेस की सरकार ने अपने चुनावी घोषणा पत्र से लेकर सत्ता में आने तक बार बार स्वंय को देश के आम आदमी का शुभचिन्तक ही बताया परन्तु कांग्रेस के शासन काल में आम आदमी को महंगाई, बेरोजगारी, अशिक्षा व भ्रष्टाचार के अलावा कुछ भी मिला है।

जब चुनाव नजदीक होते है तो रियायतों की बरसात होती है परन्तु जब चुनाव नजदीक नहीं होते है तो सरकार भी अपनी मनमानी करने से बाज नहीं आती है। यह कैसी अजीब बात है कि देश के जिम्मेदार केन्द्र सरकार के मंत्री नित्य प्रति ऐसे ऐसे बयान देने से तनिक भी चूक नहीं रहे है जिनसे देश में महंगाई को गति मिलती रहे। इन बयानों का सबसे बडा लाभ जमाखोर उठा रहे है तथा आम आदमी की हालत महंगाई ने खराब करके रख दी है व सत्ता के गलियारों में रहने वाले लोग व पूंजीपति लोग मालामाल हो गये है।

बजट 2010 से आशा थी कि वित्त मंत्री मंहगाई को काबू में रखने के लिए कुछ ठोस कदम उठाने की घोषणा जरुर करेगें परन्तु ऐसा नहीं हुआ। कांग्रेस को प्याज के दाम महंगे होने पर सत्ता ही पलटने की आवश्यकता महसूस हुई थी परन्तु जब चारों ओर महंगाई का आलम है तो कांग्रेस के चेहरे पर कुछ भी परेशानी व चिन्ता की लकीर तक नहीं है। रबर तथा वाणिज्यिक वाहनों के उत्पादन शुल्क में की गई वृद्धि से परिचालन लागत 13 प्रतिशत तक बढ़ने की आशा है। इस बजट से पैट्रोल व डीजल, उर्वरक के दाम बढ़ने से देश में बढ़ती महंगाई को मजबूती अवश्य मिलेगी तथा कृषि उत्पादन की लागत और अधिक बढ़ जायेगी। किसान फिर अपने उत्पादों के समर्थन मूल्य बढ़ाने के लिए आंदोलनों का सहारा लेने के लिए मजबूर हो जायेगें। केन्द्र सरकार के द्वारा इस बात का कोई उपाय नहीं किया गया कि कृषि की विकास दर बढ़ सके। कृषि प्रधान राज्यों को कम पैसा आंबटित किया

गया है। सीमेंट के दाम बढ़ने से आवास निर्माण उद्योग को झटका जरुर लगेगा जिससे मंहगाई और बेरोजगारी बढ़ेगी। वित्त मंत्री ने वर्तमान में देश में चल रही परियोजनाओं को समय पर पूरा करने के लिए अपनी कोई प्रतिबद्धता नहीं दिखाई है। आयकर ढांचे में बदलाव किया गया है पर इससे कम आय वालों (तीन लाख रुपये वार्षिक से कम कमाने वालों के लिए) को मंहगाई से कोई राहत नहीं मिल सकेगी। बजट 2010 में कुल कृषि ऋण को बढाने (15 प्रतिशत वृद्धि) और उसे सस्ता (5 प्रतिशत की दर) करने का प्रावधान है लेकिन किसानों को सामाजिक दायित्वों की पूर्ति के लिए ऋण का प्रावधान नहीं किया गया है। सेवा कर के दायरें को बढ़ा कर अप्रत्यक्ष कर को प्रोत्साहन देकर महंगाई को स्थायित्व प्रदान किया है। खाद्यान्न की जमाखोरी व महंगाई को रोकने की बात नहीं की गई है।

वित्त मंत्री ने विकास दर 10 प्रतिशत पर ले जाने की बात की है। यह दर वर्तमान वर्ष में 7.2 प्रतिशत है। आगामी वर्षों में इतना तेज विकास मृगमरीचिका ही साबित होगी। विकास के साथ साथ देश के आम आदमी को ध्यान में रखना चाहिए। महंगाई की मार ने अर्थशास्त्रियों के इस बजट की अच्छाइयों को भी धूमिल ही किया है। कृषि मंत्री शरद पवार के गैर जिम्मेदाराना बयानों ने महंगाई के पक्ष में माहौल बनाया तथा जमाखोरों ने उनके बयानों से भरपूर लाभ उठाया। जमाखोरी व कालाबाजारी को रोकने के लिए न तो केन्द्र सरकार ने कोई कदम उठाया और न ही राज्य सरकारों को कोई निर्देश दिये। यह बात आम आदमी को महंगाई के गहरे गड्डे में धकेलने के समान ही कही जा सकती है। आम आदमी इस बजट 2010 से आर्थिक दृष्टि से घाटे में ही रहा है। सरकार यह तो स्वीकार करती है कि महंगाई बिचौलियों के कारण बढ़ी है परन्तु इस समस्या से निपटने के लिए किसी कदम को उठाने की कोई घोषणा बजट 2010 में नहीं हुई है। पैट्रोल व डीजल के दाम बढ़ने से माल ढुलाई की दर में 10 प्रतिशत की बढ़ोतरी होना निश्चित है जिसका सीधा असर महंगाई को बढ़ाने पर ही पड़ेगा।

रियल्टी सेक्टर में सेवा कर (सर्विस टैक्स) बढ़ाने से आम आदमी के लिए घर का सपना पूरा करना नामुमकिन ही हो गया है। महंगाई से आम आदमी के पास बचत तो होगी ही नहीं। बजट 2010 में बचत के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है। सोना व चांदी पर कर की दरें बढ़ाने से आभूषण महंगे होंगे तो लोगों की किसी प्रकार भी सोने व चांदी को बचत के रूप में रखने की स्वतः प्रेरणा ही समाप्त हो जायेगी। महिला सशक्तिकरण का दम भरने वाली सरकार ने महिलाओं के लिए कोई नई योजना व रियायत की घोषणा नहीं की है। बच्चों को स्कूल भेजने के लिए बस व टैम्पों का किराया बढ़ जायेगा तथा प्रत्येक गृहस्थ का बजट ही लड़खड़ा जायेगा। आयकर की 1.60 लाख रुपये की सीमा को और बढ़ाना चाहिए था। बजट 2010 की मार्फत केन्द्र की कांग्रेस सरकार ने आम आदमी के साथ मजाक ही किया है।

बजट से पैट्रोल व डीजल, उर्वरक के दाम बढ़ने से देश में बढ़ती महंगाई को मजबूती अवश्य मिलेगी तथा कृषि उत्पादन की लागत और अधिक बढ़ जायेगी। किसान फिर अपने उत्पादों के समर्थन मूल्य बढ़ाने के लिए आंदोलनों का सहारा लेने के लिए मजबूर हो जायेगें।

देश के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री व चिन्तक अनिरुद्धम चौधरी का मानना है कि देश में 45 करोड़ लोग प्रतिदिन 1.25 डॉलर से कम कमाते है तथा 35 करोड लोग इससे थोडा ही अधिक कमाते है। देश के ग्रामीण क्षेत्र में 15 करोड़ व शहरी क्षेत्र में 2.50 करोड़ रोजगारों की कमी है। प्रतिवर्ष 20 हजार करोड़ रुपये प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए चाहिए व मूलभूत स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए 10 हजार करोड़ रुपये प्रतिवर्ष चाहिए। भारत में 1422 लोगों पर अस्पताल का एक बिस्तर (बेड) है जबकि संयुक्त राष्ट्र के द्वारा 333 लोगों पर एक बिस्तर होना चाहिए। देश में 14 लाख स्कूल (विद्या के मंदिर) है जबकि 24 लाख मंदिर (धार्मिक स्थान) है। देश में रहने वालों को न्याय इसलिए नहीं मिल पा रहा कि देश की विभिन्न न्यायालयों में तीन करोड़ मुकदमें अभी लांबित पड़े हुए है। भारत में दस लाख की जनसंख्या पर 12 न्यायाधीश है जबकि विकसित देशो में दस लाख की आबादी पर 120 न्यायाधीश है। देश के वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी ने देश की इतनी महत्वपूर्ण समस्याओं पर सहानुभूतिपूर्वक विचार ही नहीं किया है। यह भी अजीब बात है कि गत वर्ष के दौरान सरकार के द्वारा आबंटित एक लाख करोड़ रुपये का प्रयोग विभिन्न योजनाओं में किया ही नहीं गया। यह राशि इस वर्ष और बढ़ जायेगी।

बजट 2010 में कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता मिली है व उसके लिए धन का आंबटन भी बढ़ा है जो एक अच्छा कदम हो सकता है। आयकर का स्लैब बदलने से मध्यम वर्ग को लाभ पहुंचेगा। बजट 2010 में बुनियादी ढांचे के विकास पर जोर दिया गया है। अगर बजट 2010 में प्रस्तावित कल्याणकारी योजनाओं के

क्रियान्वयन की कोई प्रभावी व्यवस्था हो सके तो सही बजट अर्थव्यवस्था की काया पलट भी कर सकता था। यदि बजट 2010 को पूरे देश की अर्थव्यवस्था की दृष्टि से देखा जाता है तो इस बजट 2010 को दूरदर्शिता वाला बजट कह सकते है। बजट 2010 में सरकार ने कोई मजबूरी नहीं दिखा कर दृढता दिखाई है। ग्रामीण विकास व शहरी विकास दोनों की ही तरफ ध्यान दिया गया है। अर्थशास्त्र की कसौटी पर कुछ अर्थशास्त्री बजट को संतुलित व संतोषजनक कह सकते है। बजट 2010 से मध्यम वर्ग को लाभ तो मिलेगा वहीं छोटे उद्योगपतियों व कारोबारियों के लिए ऑडिट की सीमा 40 लाख रुपये से बढ़ाकर 60 लाख रुपये करना व पेशेवरों के लिए यह सीमा 10 लाख रुपये से बढ़ाकर 15 लाख रुपये करने से मध्यम वर्ग के लोगों व कारोबारियों को लाभ पहुंचेगा।

बजट 2010 के माध्यम से बिजली व सड़क परियोजनाओं पर निवेश बढ़ाने से देश के विकास को गति मिल सकेगी। नए रोजगार के लिए 4500 करोड़ रुपये का प्रावधान रोजगार को बढ़ायेगा। सड़क निर्माण के मद में 13 प्रतिशत व ऊर्जा के क्षेत्र में 130 प्रतिशत की वृद्धि से बुनियादी क्षेत्र में सुधार संभव हो सकेगा वहीं ग्रमीण आवास के लिए 1000 करोड़ रुपये का आंबटन ग्रमीणों को कुछ न कुछ आवास तो दिलवायेगा ही। हालांकि यह सब ऊंट के मुंह में जीरा ही साबित होगा। पूर्व में दी गई एक्साइज छूट को समाप्त करने से राजकोषीय घाटा कम होगा। इस बात में संदेह है कि बजट 2010 विकास दर व वित्तीय सुदृढ़ता दोनों को संतुलित करते हुए अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक हो सकेगा। भारत एक विशाल और विविधताओं वाला देश है। यहां हर किसी वर्ग को संतुष्ट कर पाना संभव भी नहीं है।

चूंकि चुनाव नजदीक नहीं है तो फिर देश के खास वर्ग को ध्यान में रखते हुए उनको खुश करने के लिए कुछ उपाय कर दिये गये है।

इस बजट 2010 में सबसे बड़ी चुनौती आवश्यक वस्तुओं के मूल्य नियंत्रण की थी लेकिन इसके लिए बजट 2010 में कुछ भी नहीं किया गया। बजट 2010 में अर्थव्यवस्था के सामने खड़ी चुनौतियों (कालाधन, मंहगाई व भ्रष्टाचार का बढ़ते जाना) का सामना करने के लिए कोई रणनीति नहीं अपनायी गई है। किसानों की स्थिति में सुधार के लिए धन राशि ऊंट के मुंह में जीरा व शहरी बेरोजगारी दूर करने के लिए ठोस उपाय न किया जाना हास्यास्पद ही कहा जा सकता है। शिक्षा ऋणों में ब्याज की छूट न देकर छात्रों को महंगी होती शिक्षा से दूर किया जा रहा है। कुल मिला कर वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी ने आम आदमी की सारी आशाओं पर पानी फेर दिया है व कुछ खास लोगों को आर्थिक लाभ की आशा की क्षीण किरण ही दिखाई है। यह बजट 2010 राहत देने वाला कम व चिन्ता पैदा करने वाला अधिक है क्योंकि कुछ क्षेत्र ऐसे है जो पहले की तरह से उपेक्षित नजर आते है। देश जब खाद्यान्न की कमी के कारण जबरदस्त आयी महंगाई से जूझ रहा हो तब हरित क्रांन्ति के लिए प्रतीकात्मक व सीमित प्रयास करना चिंता का ही विषय हो सकता है। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है, जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते है कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

कानून से परे नेता

भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली में बहुत से सुधार अपेक्षित हैं। संविधान लागू होने के बाद इसमें अनेक संशोधन हो चुके हैं, पर आज तक जनप्रतिनिधि बनने के लिए न्यूनतम योग्यता का निर्धारण नहीं किया गया। जब आपराधिक तत्व जनप्रतिनिधि बनकर लोकतंत्र के सबसे बड़े मंदिर में पहुंच जाते हैं तो पूरा राष्ट्र आहत होता है। सच तो यह है कि सांसद या विधायक बनने के लिए उतने मानदंड भी नहीं हैं, जितने एक पुलिस कांस्टेबल की भर्ती के लिए जरूरी होती हैं।

■ लक्ष्मीकांता चावला

भारत के उच्चतम न्यायालय ने अब यह सराहनीय निर्णय दिया है कि अगर राज्य सरकारें सीबीआई को केस चलाने की आज्ञा नहीं देती तो सीबीआई स्वयं ही कार्रवाई के लिए स्वतंत्र है। निश्चित ही इससे उच्च पदों पर बैठे तथा लोकतंत्र के मंदिरों तक पहुंचे तथाकथित वीआईपी कानून की पकड़ में आ जाएंगे।

भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली में बहुत से सुधार अपेक्षित हैं। संविधान लागू होने के बाद इसमें अनेक संशोधन हो चुके हैं, पर आज तक जनप्रतिनिधि बनने के लिए न्यूनतम योग्यता का निर्धारण नहीं किया गया। जब आपराधिक तत्व जनप्रतिनिधि बनकर लोकतंत्र के सबसे बड़े मंदिर में पहुंच जाते हैं तो पूरा राष्ट्र आहत होता है। सच तो यह है कि सांसद या विधायक बनने के लिए उतने मानदंड भी नहीं हैं, जितने एक पुलिस कांस्टेबल की भर्ती के लिए जरूरी होती हैं। जिस देश में दर्जनों सांसद और सैकड़ों विधायक आपराधिक मुकदमों में फंसे हैं, वहाँ जनप्रतिनिधियों के लिए मान–सम्मान की भावना कहां होगी। भारत के उच्चतम न्यायालय ने अब यह सराहनीय निर्णय दिया है कि अगर राज्य सरकारें सीबीआई को केस चलाने की आज्ञा नहीं देती तो सीबीआई स्वयं ही कार्रवाई के लिए स्वतंत्र है। निश्चित ही इससे उच्च पदों पर बैठे तथा लोकतंत्र के मंदिरों तक पहुंचे तथाकथित वीआईपी कानून की पकड़ में आ जाएंगे।

पिछले दिनों टीवी पर देश ने देखा कि कैसे–कैसे लोग विधायक बने हुए हैं। बिहार के एक विधायक बार–बालाओं के साथ झूम–झूम कर नाचते हैं, लेकिन जैसे ही टीवी चैनलों ने उनका असली रूप देश को दिखाया और उनका नशा उतरा वह कान पकड़कर माफी मांगने लगे। कितने अय्याश और कायर लोग विधायक बन सकते हैं, यह इसका उदाहरण है।

दूसरा मामला इटावा का है। जिस तरह विधायक को सरेआम गोलियां चलाते और धमकी देते देखा गया, उससे साबित हो गया कि कुछ जनप्रतिनिधि कानून से ऊपर है। अगर ऐसा न होता तो उस विधायक का इतना दुस्साहस न होता कि वह एक इंजीनियर को खुली धमकी दे कि अगर उसका हाल भी ओरैया के इंजीनियर जैसा होगा। भारत में कानून को प्रभावशाली व धनी लोगों का अपराध दिखाई नहीं देता। इसी का लाभ उठाते हुए कुछ ऐसे लोग भी सम्माननीय बन चुके हैं जिन्हें सलाखों के पीछे होना चाहिए था।

विडंबना है कि हत्या, दुष्कर्म और अपहरण जैसे जघन्य अपराधों में लिप्त कुछ लोग विधायक या सांसद बनकर

विधायिका में पहुंच जाते हैं और कानून बनाने का अधिकार हासिल कर लेते हैं? जो खुद कानून का पालन नहीं करते क्या उन लोगों को सांसद और विधायक बनाए रखना उचित है? सवाल यह भी है कि जन प्रतिनिधियों के केवल अधिकार ही होते हैं या कर्तव्य भी तय हैं?

कई बार जन प्रतिनिधि लोकसभा अथवा विधानसभाओं के अध्यक्ष से शिकायत करते हैं कि अधिकारी उनका सम्मान नहीं करते। उनकी शिकायत का सम्मान करते हुए विशेषाधिकार समिति अधिकारियों को बुलाती है, समझाती है और कभी–कभी दंडित भी करती है।

लेकिन कभी किसी ने यह नहीं पूछा कि इस जनप्रतिनिधि ने अधिकारी के साथ दुर्व्यवहार तो नहीं किया?

क्या हम किसी जनप्रतिनिधि को यह अधिकार दे सकते हैं कि वह बीच चौराहे पर अधिकारियों या कर्मचारियों को अपमानित करे?

सरकार को एक ऐसी लक्ष्मण रेखा खींचनी ही होगी जो जनप्रतिनिधियों के लिए मर्यादा तय करे। चुनाव जीतने के बाद जो लोग मर्यादाओं का उल्लंघन करते हैं, उन्हें वापस उनके उचित स्थान पर भेजने के लिए भी कानून होना चाहिए। इसके लिए चाहे संविधान में संशोधन ही क्यों न करना पड़े।

संविधान में यह व्यवस्था होनी चाहिए कि अपराध से जुड़े अथवा अपराध करने वाले नागरिक चुनाव लड़ने के अयोग्य होंगे। साथ ही सांसदों और विधायकों के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता भी तय होनी चाहिए।

सांसदों और विधायकों के लिए आचार संहिता भी जरूरी है। पिछले कुछ समय में कुछ ऐसी घटनाएं हुई जिनसे सदन शर्मसार हो गया। कुछ सांसदों ने सदन में प्रश्न पूछने के लिए रिश्वत ली और कुछ प्रश्न पूछकर उत्तर के समय गायब हो गए।

बहुत से सांसद और विधायक ऐसे भी हैं जो अपने पूरे कार्यकाल में सदन में मुंह नहीं खोलते।

आखिर क्यों न यह आवश्यक किया जाए कि हर सांसद और विधायक कुछ प्रश्न अवश्य पूछे। यह लोकतंत्र के हित में है कि स्वच्छ छवि वाले लोग ही विधायक और सांसद बनें। यह नियम पंचायत से पार्लियामेंट तक लागू होना चाहिए।

निश्चित ही देश के संविधानविदों को एक लक्ष्मण रेखा खींचनी होगी जिसकी मर्यादा में रहना हर जनप्रतिनिधि के लिए आवश्यक हो और उसके उल्लंघन पर उन्हें अयोग्य करार दिया जा सके। ❑

(पृष्ठ 12 का शेष. . .)

कारों की संख्या घटाने से होगा आर्थिक विकास

कार का उपयोग ज्यादा कर रहे हैं और ट्रैफिक जाम बढ़ रहे हैं। अगले चरण में यदि 30 किलोमीटर का एवरेज मिलने लगा तो समस्या और गंभीर हो जायेगी चूंकि कार यात्रियों की संख्या बढ़ जायेगी।

मेट्रो बनाने एवं बसों की संख्या बढ़ाने से भी समस्या का हल नहीं निकलता है। यूनिवर्सिटी आफ टोरंटो के प्रोफेसर मैथ्यू टर्नर लिखते हैंः ''बस की संख्या में वृद्धि का प्रभाव सड़क बनाने के समान होता है। हर व्यक्ति जो कार छोड़कर बस में यात्रा करता है वह कुछ समय के लिये सड़क को खाली कर देता है। शीघ्र ही दूसरे लोगों द्वारा इस खालीपन को भर दिया जाता है।'' इस प्रकार बस एवं मेट्रो से कुल यात्रियों की संख्या में वृद्धि होती है परन्तु सड़क पर कार का ट्रैफिक कम नहीं होता है।

ट्रैफिक जाम का एकमात्र हल शहरों के भीड़ क्षेत्र में कार चलाने पर विशेष टैक्स लगाना है। इसे ''भीड़ टैक्स'' का नाम दिया जा सकता है। लंदन शहर के केन्द्र में कार चलाने को एक दिन का 500 रू0 का परमिट खरीदना पड़ता है। स्टाकहोम, सिंगापुर एवं सियोल जैसे महानगरों में भी इसी प्रकार के टैक्स लगाये गये हैं और सार्थक परिणाम सामने आये हैं। हमें सभी शहरों के चिन्हित इलाकों में प्रवेश पर 1000 रू प्रतिदिन का परमिट लागू करना चाहिये। टैक्सियों के लिये भी इन क्षेत्रों में प्रवेश को महंगे परमिट जारी करने चाहिये। केवल सचिव स्तर के अधिकारियों एवं मंत्रियों इस टैक्स से छूट दी जानी चाहिये। साथ–साथ बस एवं मेट्रो का विस्तार किया जाना चाहिये।

कार उद्योग की दृष्टि सीमित है। उन्हें केवल कार बनाकर बेचने से मतलब है। उन्हे इस बात से क्या लेना देना कि कार की संख्या में अति वृद्धि से यात्री का समय बर्बाद हो रहा है। कार की संख्या के निर्धारण को बाजार की स्वतंत्र चाल पर नहीं छोड़ना चाहिये। एडम स्मिथ के सुझाव का समुचित अनुपालन होना चाहिये। ऐसे नियम कानून बनाने चाहिये कि लोग कार में सफर कम करें और गंतव्य स्थान पर शीघ्र पहुंचें। कार के उत्पादन एवं पेट्रोल की बिक्री कम होने से सकल घरेलू उत्पाद में गिरावट अवश्य आयेगी परन्तु इससे ज्यादा वृद्धि समय की बचत और उससे होने वाले लाभों में होगी। ❑

चीनी माल का बहिष्कार करें

भारत से सस्ता व गुणवत्ता युक्त माल कोई देश नहीं बना सकता है

अलीगढ़ः फरवरी माह में अर्थशास्त्र विभाग धर्मसमाज महाविद्यालय व स्वदेशी जागरण मंच के तत्वावधान में 'भारतीय अर्थव्यवस्था पर चीन का प्रभाव' पर संगोष्ठी धर्मसमाज महाविद्यालय के पुस्तकालय में विभागाध्यक्ष डॉ. ए.के.एस. तौमर की अध्यक्षता में संपन्न हुई।

गोष्ठी में दिल्ली विश्वविद्यालय से पधारे डॉ. अश्विनी महाजन ने कहा कि चीन आर्थिक और सामाजिक चुनौती के रूप में हमारे स्वाभिमान को डगमगाना चाहता है। भारतीय महानता भारतीय युवाओं की शक्ति में है। अमेरिका जैसे देश का राष्ट्रपति भी भारत से डरा हुआ है इसलिए भारत पर विभिन्न प्रकार के प्रतिबंध लगाता है।

उन्होंने कहा कि प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से जितना समृद्ध भारत है उतना कोई अन्य देश नहीं। चीन भारतीय लोकतंत्र से डरा हुआ है। चीन और भारत का व्यापार बढ़ रहा है लेकिन भारत चीन से निर्मित माल का आयात करता है जबकि कच्चे माल का निर्यात करता है। डब्ल्यूटीओ की शर्तों के अधीन सरकार चीन से बिना प्रशुल्क के माल का आयात कर रही है। चीन के साथ व्यापार के कारण भारत पर अंतर्राष्ट्रीय कर्जा बढ़ रहा है। चीन तैयार लागत से कम कीमत पर वस्तुओं का निर्यात कर रहा है। जिससे विभिन्न देशों के उद्योग प्रभावित हो रहे हैं।

डॉ. महाजन ने कहा कि चीन व्यापार के नाम युद्ध कर रहा है अतः उस युद्ध का युद्ध की तरह लड़ना होगा। भारत से सस्ता व गुणवत्ता युक्त माल कोई देश नहीं बना सकता है। चीनी उत्पाद को घटिया उत्पाद की श्रेणी में रखा जाता है। सबसे बड़ा दुर्भाग्य है कि भारत सरकार द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र के निर्माण के ठेके चीनी लोागें को दिए जा रहे हैं। जिसे रोकना चाहिए।

डॉ. अश्विनी महाजन ने आह्वान किया कि चीन को शत्रु राष्ट्र घोषित करके उससे आने वाले माल को रोकना चाहिए तथा चीनी माल का बहिष्कार करना चाहिए।

कार्यक्रम में वक्ता के रूप में उपस्थित क्षेत्रीय संगठक स्वदेशी जागरण मंच के डॉ. चंद्र मोहन जी ने कहा कि चीन पूरे विश्व के सामने चुनौती बना हुआ है। वैश्वीकरण को हमें रोकना होगा तभी हम चीन से अपने देश को बचा सकते हैं।

चीन अपने माल को देश में फैलाना चाहता है। चीन को सबसे अधिक खतरा भारत से है। क्योंकि भारत चीन को कड़ी प्रतियोगिता दे रहा है तथा हमारी संस्कृति को भी चीन द्वारा छिन्न–भिन्न करने का प्रयास किया जा रहा है।

उन्होंने कहा कि उपभोक्तावादी संस्कृति को नकारना होगा बल्कि उत्पादक के रूप में सोचना होगा। हमारे सामने चुनौती स्वालंबन को बचाए रखने की है। भारतीय संस्कृति के अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए चीन की वस्तुओं का बहिष्कार आवश्यक है। भारतीय युवा पीढ़ी विश्व के किसी भी देश की चुनौती का सामना करने में सक्षम है।

अर्थशास्त्र विभाग की प्राध्यापिका डॉ. इन्दु वाष्णैय ने कहा कि चीन का विकास भारत के विकास से तीव्र गति से हो रहा है। चीन जीडीपी के क्षेत्र में, कृषिगत विकास के क्षेत्र में, व्यापार के क्षेत्र में, नागरिक सुविधाएं उपलब्ध कराने के क्षेत्र में भारत से आगे है। डॉ. इन्दु वाष्णैय ने चिंता व्यक्त की कि इलैक्ट्रिकल व इलैक्ट्रोनिक उत्पाद के क्षेत्र में चीन ने भारतीय उद्योग को छिन्न–भिन्न कर दिया है।

शोध छात्रा कु. माधुरी वर्मा ने कहा कि लघु उद्योगों पर चीनी वस्तुओं का प्रभाव नकारात्मक पड़ा है, जिससे रोजगार के स्तर पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। बाजार सस्ती चीनी वस्तुओं से भरा पड़ा है। सस्ती चीनी सिल्क, भारतीय सिल्क को कड़ी प्रतियोगिता दे रहा है। इसे रोकने की आवश्यकता होगी।

अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में डॉ. ए. के.एस. तौमर ने कहा कि चीन अपने माल को देश में फैलाना चाहता है। चीन को सबसे अधिक खतरा भारत से है। क्योंकि भारत चीन को कड़ी प्रतियोगिता दे रहा है तथा हमारी संस्कृति को भी चीन द्वारा छिन्न–भिन्न करने का प्रयास किया जा रहा है।

स्वदेशी जागरण मंच के राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य डॉ. राजीव अग्रवाल ने कहा कि अपनी भारत भूमि रत्न गर्भा है यहाँ किसी भी चीज की कमी नहीं है, कमी है तो सिर्फ राष्ट्रभक्ति की। युवा पीढ़ी को राष्ट्रभक्ति की भावना से ओतप्रोत होना चाहिए। कार्यक्रम का प्रारंभ माँ सरस्वती के समक्ष दीप प्रज्ज्वल से हुआ तथा संचालन डॉ. राजीव अग्रवाल ने किया। धन्यवाद ज्ञापन लघु उद्योग भारती के प्रदेश महामंत्री मुकेश जिंदल व डॉ. इन्दु वाष्णैय ने किया।

कार्यक्रम में श्री यतीन्द्र मोहन झा, सुनील पाली, विवेक सारावत और अनेक कार्यकर्ता उपस्थित थे। ❑

जरूरत है छोटे राज्यों के निर्माण की

■ कल्लूरी श्रीनिवास रेड्डी

1956 में आंध्र प्रदेश राज्य कुछ शर्तों के आधार पर बना था। आंध्र क्षेत्र से मिलने के लिए तेलंगाना जनता को अनेक विषयों पर भय था। उनके सारे भय 53 वर्षों में सही साक्षात्कार हुये। आश्वासनों की या शर्तों की खुलेआम उल्लंघन होते आए हैं। पिछले कुछ महीने से चलते आ रहा आन्दोलन में 200 से अधिक छात्रों ने, बेरोजगारों ने, अनेक वर्ग के लोगों ने अलग राज्य के लिए आत्म बलिदान दिए हैं। फिर भी केंद्र सरकर उसे एक समस्या के रूप में नहीं देख रही है। उसको एक तत्काल समस्या समझ रही है। उसी रूप से वे श्री कृष्ण कमिटी बनाकर तत्काल समस्या का निवारण के प्रयास कर रहे हैं। 53 वर्षों से चलते आ रहा समस्या का समाधान ढूंढ़ने का प्रयास उनमें कहीं भी नहीं दिख रहा है।

तेलंगाना 1948 से लेकर 1956 तक एक राज्य था। आज वे कोई नये राज्य की मांग नहीं कर रहे हैं। एस.आर.सी (States re-organaisation comission) रिपोर्ट के आधार पर भी उनका राज्य मांग रहे है।

केंद्र में जो भी सरकार हो, गत 6 दशकों से तेलंगाना जनता के साथ अन्याय करते आ रहे हैं। तेलंगाना एक ऐतिहासिक क्षेत्र है।

आजादी से पहले आंध्र क्षेत्र मद्रास प्रेसिडेंसी में था। आजादी के बाद 1953 में मद्रास राज्य से अलग होकर आंध्र राज्य बना। इस तरह 1948 से लेकर हैदराबाद (तेलंगाना) एक राज्य था। तेलंगाना जनता अलग राज्य की मांग आज से नहीं, आंध्र प्रदेश राज्य बनने के दिन से ही है। क्या? देश में एक क्षेत्र को दूसरा क्षेत्र कहीं आश्वासन पत्र लिख कर दिया है? क्यों लिख कर देना पड़ा?

1956 में नेहरू सरकर ने राज्यों की पुनर्व्यवस्थीकरण कमीशन की सिफारिश का उल्लंघन करके आंध्र प्रदेश राज्य बनाया था। उस कमीशन रिपोर्ट ने तेलंगाना को राज्य बनाने की सिफारिश किया था। तेलंगाना के साथ यह पहला अन्याय हुआ था। दूसरा, तेलंगाना जनता को जेंटिल मेन अग्रीमेंट नाम पर आश्वासन आंध्र क्षेत्र के नेताओं की ओर से लिख कर दिया गया था लेकिन उस आश्वासन का उल्लंघन दूसरे दिन से ही शुरू हो गया था।

फिर 1969 में अलग राज्य का आंदोलन चला, लेकिन आंदोलन के कुछ नेताओं के विद्रोह से दूसरी बार तेलंगाना अलग राज्य बनने से वंचित रहा गया। उसके बाद 1998 में भारतीय जनता पार्टी की ओर से तेलंगाना जनता को अलग राज्य का आश्वासन मिला।

तेलंगाना जनता ने भी भाजपा को पहली बार 26 प्रतिशत वोट से आदर किया। उस आदर को निभाने में भाजपा भी नाकाम रही। तेलुगु देशम मदद की आड़ में उस आश्वासन को टुकरा दिया। आज यूपीए सरकर का भी गत 6 वर्षों से वही नीति रही है।

देश को समग्र विकास पाना है तो बड़े राज्यों का विभाजन अनिवार्य है। बड़े राज्यों की जनता को अगर सही हक पाना है तो उन्हें छोटे राज्यों की मांग करनी चाहिए।

आज संसद (लोकसभा) में केवल 6 बड़े राज्यों ने 291 स्थानों का प्रतिनिधित्व कर रहे है। संसद में बाकी 22 राज्यों का कोई मूल्य है? लोकसभा में आधे से अधिक स्थान केवल 6 बड़े राज्यों के हाथ में रहा है। उत्तर प्रदेश से सा.पा., आँध्र प्रदेश से ते.दे.पा., बिहार से रा.जा.द, जा.द(यू), तमिलनाडु से द्रमुक, अद्रमुक, महाराष्ट्र से रा.का.पा, शिवसेना, बंगाल से थुनामुल , मां.का.पा – ये 11 बड़े क्षेत्रीय दल अपने–अपने बड़े राज्यों के बल पर केंद्र में मिली–जुली सरकार बनाते रहते हैं।

आज बड़े राज्यों के विभाजन को केवल बड़े क्षेत्रीय दलों के अधिनेता ही विरोध कर रहे हैं। उनके विशाल राज्य आकांक्षा के लिए विरोध कर रहे है। उत्तरप्रदेश में मुलायम, बिहार में लालू और नितीश, बंगाल में बुधदेव और ममता, महाराष्ट्र में पवार और ठाकरे, आंध्रप्रदेश में चंद्रबाबू, तमिलनाडु में करूणानिधि और जयललिता ये सब शिखंडी का रोल अदा करके अपने–अपने बड़े राज्यों के विभाजन का विरोध कर रहे हैं।

उत्तर प्रदेश को एक सामानांतर देश समझ ने वाले मुलायम सिंह के बारे मे सारा देश जानता है। इस बड़े क्षेत्रीय दल के सुप्रीम को देश की प्रसिद्ध कंपनियां सहयोग दे रही हैं। इन्हीं से ही इनका राजनीतिक जीवन साम्राज्य चलता है। इसलिए जब कोई बड़े राज्य की विभाजन की बात आए तो सब से पहले मुलायम सिंह ही विरोध करते है। इनके दुर्व्यवहार को यूपी जैसे बडे राज्य ही बढ़ा रहा है।

आज यूपी को 3 राज्य बनाने का मांग कर रही मायावती मुलायम सिंह से बेहतर है। बिहार में ''जब तक समोसा में आलू रहेगा बिहार में लालू का राज रहेगा'' स्वयं लालू इस नारे को प्रचार में रखते हैं। इस नारे में दिख रहे दुराहंकर के कारण बिहार जैसे बड़ा राज्य छोड़ कर और कोई कारण नहीं है।

अब आँध्रप्रदेश और तेलुगु देशम के बारे

(शेष पृष्ठ 36 पर . . .)

स्मरण

निष्काम सेवा से राष्ट्रोत्थान के उद्घोषक थे नानाजी

अपने 94 वर्षों की लम्बी निष्काम सेवा ने उनका असली नाम चण्डिका दास अमृतराव देशमुख से नाना जी देशमुख रख दिया। निर्धनता के कारण सब्जी बेच किताबें जुटाकर पढ़ने वाले नानाजी देशमुख लोकमान्य तिलक के विचारों से बहुत प्रभावित थे।

■ विनोद बंसल

यूं तो हमारा देश पुरातन काल से ही ऋषियों, मुनियों, मनीशियों, समाज सुधारकों व महापुरूषों का जनक रहा है जिन्होंने न सिर्फ भारत बल्कि पूरे विश्व का मार्गदर्शन कर जगत कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है किन्तु, आधुनिक युग की बदलती हुई परिस्थितियों में ऐसे महापुरूष विरले ही हैं। 11 अक्टूबर, 1916 को महाराष्ट्र के परभणी जिले के एक छोटे से ग्राम कडोली में जन्मे चण्डिका दास अमृतराव देशमुख ने अपने वाल्यावस्था में शायद ही ऐसी कल्पना की होगी कि वह अपने जीवन काल में किये गये सेवा, संस्कार व शिक्षा के प्रसार के माध्यम से 50,000 से अधिक विद्यालयों की स्थापना, 500 से अधिक ग्रामों का विकास, भारतीय जनसंघ, जनता पार्टी, दीनदयाल शोध संस्थान, राष्ट्र धर्म, पान्चजन्य व दैनिक स्वदेश का सम्पादन/प्रबन्धन के साथ–साथ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का नाम पूरे विश्व में फैलाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा पायेगा। भारत सरकार उन्हें पद्म विभूषण से सम्मानित कर राज्यसभा के लिए स्वतः मनोनीत करेगी यह तो सोचा ही कैसे जा सकता था।

अपने 94 वर्षों की लम्बी निष्काम सेवा ने उनका असली नाम चण्डिका दास अमृतराव देशमुख से नाना जी देशमुख रख दिया। निर्धनता के कारण सब्जी बेच किताबें जुटाकर पढ़ने वाले नानाजी देशमुख लोकमान्य तिलक के विचारों से बहुत प्रभावित थे। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. हेडगेवार की राष्ट्र निष्ठा ने उन्हें संघ से जोड़ा। 1940 में उन्होंने अपना सर्वस्व समर्पित कर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया तथा आगरा से संघ प्रचारक के रूप में अपना समाज जीवन आरम्भ किया। विषम आर्थिक परिस्थितियों व राजनैतिक विरोधों के बावजूद उन्होंने मात्र 3 वर्षों में गोरखपुर के आसपास 250 से अधिक संघ शाखाऐं प्रारम्भ करवायीं। शिक्षा की दुर्दशा को देखते हुए 1950 में गोरखपुर में ही उन्होंने पहला सरस्वती शिशु मन्दिर विद्यालय खुलवाया। संस्कारवान व राष्ट्रनिष्ठ नागरिक बनाने वाले ऐसे 50000 से अधिक विद्यालय आज देश के कोने– कोने में चल रहे हैं। राष्ट्रधर्म, पान्चजन्य व दैनिक स्वदेश जैसे विख्यात प्रकाशन नानाजी के मार्ग दर्शन की ही देन हैं।

1951 में जनसंघ की स्थापना के बाद

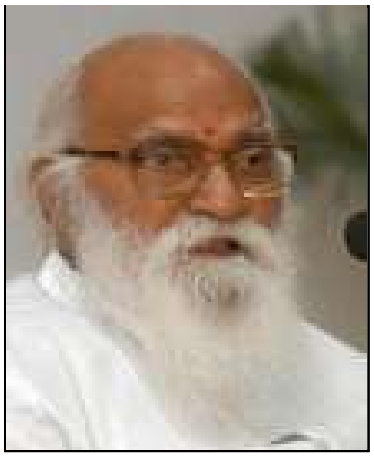

नाना जी को उत्तर प्रदेश का प्रदेश संगठन मंत्री बनाया गया जिन्होंने 1957 तक प्रदेश के सभी जिलों में जनसंघ का अलख जगाया। उत्तर प्रदेश की 412 सदस्यों वाली विधानसभा में जनसंघ के 99 विधायक चुनवाकर कॉंग्रस को हिला दिया। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के बलिदान के पश्चात् पंडित दीन दयाल उपाध्याय को जनसंघ का अखिल भारतीय महामंत्री तथा नाना जी को अखिल भारतीय संगठन मंत्री बनाया गया। जहां एक ओर श्री विनोबा भावे के भूदान आन्दोलन में उन्होंने बढ़–चढ़कर भाग लिया तो वहीं दूसरी ओर श्री जय प्रकाश नारायण के आन्दोलन के दौरान पटना में अपने ऊपर लाठियां खाकर श्री जय प्रकाश नारायण को बचाया। आपातकाल में जयप्रकाश नारायण की गिरफ्तारी के उपरान्त वे प्रथम सत्याग्रही बने और देश भर के कार्यकर्ताओं का नेतृत्व करते रहे। 1977 में आपात काल समाप्ति पर देशभर की सरकारों में जनसंघ सहयोगी रहा तथा नानाजी को केन्द्र में उद्योग मंत्री का प्रस्ताव भेजा जिसे नाना जी ने सविनय ठुकरा दिया। 60 वर्ष की आयु में राजनीति छोड़ उत्तर प्रदेश के गोण्डा जनपद में ग्राम विकास में जुटकर वे महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज के दर्शन को अमली जामा पहनाने वाले महामनीषी बने। प्रचार से दूर रहने वाले निष्काम कर्मयोगी द्वारा केवल गांवों की दशा सुधार का उन्हें अपने बलबूते पर खड़कर आत्मनिर्भर बनाने के लिए जो कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये उन्होंने भारतीय जनमानस पर अमिट छाप छोड़ दी। 2005 में प्रारम्भ किये गये चित्रकूट ग्रामोदय प्रकल्प ने चित्रकूट के आसपास 500 से अधिक ग्रामों को स्वाबलम्बी बना दिया तथा देश को पहला ग्रामोदय विश्वविद्यालय प्रदान किया। वे ग्राम विकास के सच्चे पुरोधा थे। सफल ग्रामोत्थान के इन्हीं प्रयोगों के लिए उन्हें पद्म विभूषण की उपाधि से विभूषित कर राज्यसभा के लिए भी मनोनीत किया गया। दीनदयाल शोध संस्थान नाना जी की कल्पना का ही एक साकार रूप है।

लगभग एक शतक लम्बी राष्ट्र को समर्पित आयु के अन्तिम पड़ाव से पूर्व ही उन्होंने तय कर लिया था कि जब तक जीवित हैं तब तक स्वयं तथा मृत्यु के बाद उनकी देह राष्ट्र के काम आये। दिल्ली की दधीचि देहदान समिति को अपने देहदान सम्बन्धी शपथ पत्र पर हस्ताक्षर करते हुए नाना जी ने कहा था कि मैंने जीवन भर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की शाखा में होने वाली दैनिक प्रार्थना में बोला है –'पतत्वेष कायो, नमस्ते–नमस्ते' अर्थात् हे भारत माता

मैं अपनी यह काया हंसते हंसते तेरे ऊपर अर्पण कर दूं। अतः मृत्योपरान्त उन्होंने न सिर्फ अपना देह दान कर चिकित्सा शास्त्र पढ़ने वाले युवकों के अध्यापन हेतु अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान को समर्पित करने का संकल्प किया बल्कि दस हजार रूपये की अग्रिम राशि भी समिति को दी जिससे देश के किसी भी भाग से उनका शांत शरीर इस कार्य हेतु उचित स्थान पर लाया जा सके। ऐसे राष्ट्र पुरूष व महामनीषि को हम सब का शत् शत् नमन्। ❑

नानाजी स्वदेशी के प्रबल पक्षधर थे

दिनांक 28 फरवरी को सांयकाल 5.00 बजे स्थानीय इकाई स्वदेशी जागरण मंच शाहपुरा कार्यालय में समाजसेवी नाना जी देशमुख को श्रद्धंजलि का कार्यक्रम किया गया। मुख्यवक्ता के रूप में श्री लालचन्द जी बेली (वन्देमातरम् फाउण्डेशन, मुंबई) के उपाध्यक्ष ने स्व. नानाजी के जीवन पर प्रकाश डाला और बताया कि नानाजी हमेशा स्वदेशी के प्रबल पक्षधर रहे थे और अंतिम समय तक उन्होंने चित्रकूट के निकट के ग्रामीणों को स्वदेशी आधारित खेती तथा अपने जीवन जीने की कला से ग्रामीण को प्रभावित किया था। इस कार्य से प्रभावित होकर भारत सरकार ने नानाजी देशमुख को पद्म विभूषण से सम्मानित किया। नानाजी जनसंघ एवं दीनदयाल शोध संस्थान के संस्थापक सदस्य थे। आजीवन अविवाहित रहकर राष्ट्रीय स्वयंसेक संघ के प्रचारक के रूप में उन्होंने सामाजिक कार्य की सक्रिय भूमिका निभायी तथा राज्य सभा के सदस्य भी रहे। अनेक जाने–माने कार्यकर्ता जिनमें श्री कन्हैया लाल धाकड़ (न.पा. अध्यक्ष, शाहपुरा), ओम प्रकाश दीपा (विधा भारती) और आम जनों ने भी स्व. नानाजी देशमुख को श्रद्धांजलि अर्पित की।❑

(पृष्ठ 34 का शेष. . .)

जरूरत है छोटे राज्यों के निर्माण की

मे इस देश का जवाबदारी केंद्र सरकर को 'मिथ्या' (शून्य) कह कर तेलुगुदेशम पार्टी जन्म लिया था। तेलुगु सेल्फ रेस्पेक्ट नाम लेकर इस बड़े राज्य में जीवन चलाने वाली तेलुगु देशम पार्टी हमेशा राज्य विभाजन का विरोध करते आ रही है। इस विशाल राज्य में इनका सत्ता आकांक्षा के लिए इस बड़े राज्य की एक पूँजी बन गयी। इस बड़े राज्य विभाजन का 'प्रथम विरोधी चंद्रबाबू को छोड़कर और कोई नहीं हो सकता। इस बारे मे राष्ट्रीय दलों का डबल रोल द्वितीय स्थान प्राप्त कर सकता है। क्योंकि एक बड़े क्षेत्रीय दल का विरोध को ध्यान में रख कर राष्ट्रीय दल भी समय समय पर अपना निर्णय बदलते आ रहे हैं।

1996 से लेकर 2004 तक चंद्रबाबू मुख्यमंत्री रहे। इस काल में उन्होंने केंद्र सरकारों में रोल करते हुए अपने आपको प्रचार में रख लिया था। उन्होंने वास्तव में राज्य को लाभ नहीं किया बल्कि अपने आपको अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मुफ्त प्रचार की कोशिश की। वे राज्य को राष्ट्र समझकर चला रहे थे।

आज बड़े राज्य रहने से, उसकी संसद शक्ति से लाभ होने का गलत स्वरूप प्रचार भी कुछ नेता करते रहते हैं। थोड़ी देर के लिए सच समझें, अगर असम राज्य का हक आंध्र छीन ले, तो आंध्र से उत्तर प्रदेश से छिनेगा, उत्तर प्रदेश से बिहार, बिहार से महाराष्ट्र, महाराष्ट्र से तमिलनाडु। ऐसा बड़े राज्य क्या पा रहे हैं? पूर्व रेल मंत्री लालू, अब ममता अपने–अपने बड़े राज्यों को अधिक (दूसरे राज्यों का हक मार कर) इनकरमज अलोट करे, तब बाकी 5 बड़े राज्य क्या कर सकेगें? इसलिए बड़े राज्य अपने संसद शक्ति से कुछ भी प्राप्त करने का एक गलत सोंच है। आज बड़े राज्यों की जनता को भ्रम में रख कर अपना उल्लू सीदा कर लेना, बड़े क्षेत्रीय दलों की सोंच है। एक बड़ा राज्य एक आद ब्लाक मेल से प्राप्त करके बचे 90 प्रतिशत असली विकास को बाकी बड़े राज्यों को खो रहा है। अगर बड़े क्षेत्रीय दलों का नारा सच है, अनेक छोटे राज्यों से भी विकास में बड़े राज्य आज भी क्यों पीछे है? आज बड़े राज्यों ने ही समग्र विकास से वंचित है, बड़े राज्य अपने आप विकास न करके देश की समान्तर विकास को भी नष्ट दायक बन गए है। इन 6 बड़े राज्यों का विभाजन ही देश में सम विकास ला सकता है। आज आंध्र प्रदेश के विभाजन को भी सभी ने उसी दृष्टि से देखना है। बड़े राज्यों का विभाजन में राष्ट्र हित है।

देश को समग्र विकास पाना है तो बड़े राज्यों का विभाजन अनिवार्य है। बड़े राज्यों की जनता को अगर सही हक पाना है तो उन्हें छोटे राज्यों की मांग करनी चाहिए।

इसलिए तेलंगाना जनता की आकांक्षा ने, देश की अखंडता को और सत्ता विकेंद्रीकरण को एक मजबूत बुनियाद अवश्य होगा। ये राज्यों के बीच में समांतरता लाने का मजबूत प्रयास है। इससे विशेषकर, देश में बड़े क्षेत्रीय दलों की पीड़ा कम होगी। आज जो देश में मौजूदा 6 बड़े राज्यों में राष्ट्रीय दलों का कोंई अस्तित्व (आंध्र प्रदेश में कांग्रेस को छोड़ कर) नहीं रहा। आज देश में छोटे राज्यों में ही राष्ट्रीय दलों का अस्तित्व और प्रतिनिधित्व देखने को मिलाता है। बड़े राज्यों के विभाजन से ही राष्ट्रीय दलों का विस्तार होगा और एक बात भी हमें समझना चाहिए कि अगर छोटे राज्यों में एकाद छोटे क्षत्रीय दल होगा तो उसे देश हित को कोई हानि नहीं होगी। क्योंकि उनके संसद शक्ति उतनी नहीं होगी।

आज विदेशी शासक भारतीय प्रधान मंत्री से अधिक बड़े राज्यों के मुख्यमंत्री से (विशेष कर बड़े क्षेत्रीय दलों के मुख्यमंत्री) से संपर्क रखने में रूचि दिखा रहे है। पिछले दो दशक से ये सिलसिला चलता आ रहा है। ये सारी चीजें गिरती जा रही राष्ट्र अस्तित्व को हम स्पष्ट रूप से समझ सकते है। ये भी समझ सकते हैं कि इसका विकल्प बड़े राज्यों का विभाजन ही है। इसलिए राष्ट्र का हित को ध्यान में रखते हुए, तेलंगाना राज्य मांग सफल होने का प्रयास हर राष्ट्र भक्त करें। ❑